इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC 134
हिन्दी गद्य साहित्य



खंड 1, 2 एवं 3

''शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्तमान विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

– इन्दिरा गांधी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

"Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances."

– Indira Gandhi

इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC-134
हिंदी गद्य साहित्य

खंड

1

हिंदी गद्य का स्वरूप और विकास

इकाई 1
हिंदी गद्य का विकास

इकाई 2
हिंदी गद्य की विविध विधाएँ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. कुलदीप चंद अग्निहोत्री
कुलपति, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश
धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश)

प्रो. चंदन कुमार
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. महेन्द्रपाल शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

प्रो. अनिल राय
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

संकाय सदस्य
प्रो. सत्यकाम, समकुलपति
प्रो. शत्रुघ्न कुमार
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी, (पाठ्यक्रम संयोजक)
प्रो. जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

पाठ्यक्रम संयोजक एवं संपादक

प्रो. स्मिता चतुर्वेदी
हिंदी संकाय, मानविकी विद्यापीठ,
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

इकाई लेखक	इकाई संख्या
प्रो. जवरीमल्ल पारख प्रोफेसर (सेवानिवृत्त), हिंदी विभाग इग्नू, नई दिल्ली	1,2,9 एवं 10
प्रो. रामबक्ष प्रोफेसर (सेवानिवृत्त), भारतीय भाषा केन्द्र जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,नई दिल्ली	3,4,11,12 एवं 13
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी हिंदी संकाय, मानविकी विद्यापीठ इग्नू, नई दिल्ली	5,6,7 एवं 8
प्रो. रामबक्ष प्रो. स्मिता चतुर्वेदी	14 एवं 15

संयोजन एवं संपादन
प्रो. स्मिता चतुर्वेदी
हिंदी संकाय, मानविकी विद्यापीठ,
इग्नू, नई दिल्ली

सचिवालयीय सहयोग

श्री नवल कुमार
मानविकी विद्यापीठ, इग्नू

आवरण

श्री तमल बसु

मुद्रण प्रस्तुति

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
सामग्री निर्माण एवं वितरण विभाग, इग्नू

श्री यशपाल
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन) सामग्री निर्माण
एवं वितरण विभाग, इग्नू

जनवरी, 2021

©इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2021

ISBN: 978-93-90773-53-4

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली-110068 से अथवा इग्नू की आधिकारिक वेबसाइट www.ignou.ac.in से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, मानविकी विद्यापीठ द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

लेज़र टाइप सेट- टेसा मीडिया एण्ड कंप्यूटर्स

मुद्रक : अमेटी ऑफसेट प्रिंटर्स, 12/38, साईट -iv, साहिबाबाद इन्डस्ट्रियल एरिया, गाजियाबाद (उ0 प्र0)

पाठ्यक्रम परिचय

प्रस्तुत पाठ्यक्रम सी.बी.सी.एस के स्नातक उपाधि कार्यक्रम का पाठ्यक्रम है। इस पाठ्यक्रम में आप हिंदी गद्य की कुछ विशिष्ट विधाओं की रचनाओं का अध्ययन करेंगे। इस क्रम में आपको साहित्य की तीन गद्य विधाओं – उपन्यास, कहानी और निबंध का अध्ययन कराया जाएगा। इस प्रक्रिया में जैनेन्द्र कुमार के उपन्यास 'त्यागपत्र', प्रेमचंद की कहानी 'नमक का दारोगा', जयशंकर प्रसाद की कहानी 'आकाशदीप' तथा उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी', का वाचन और विश्लेषण प्रस्तुत किया जाएगा। इसके साथ–साथ हिंदी निबंध साहित्य के अंतर्गत रामचंद्र शुक्ल का निबंध 'लोभ और प्रीति', हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध 'कुटज' और कुबेरनाथ राय का निबंध 'सहस्र फणों का मणि-दीप' का भी अध्ययन कराया जाएगा।

इन रचनाओं की विशेषताओं तथा उनके मूल कथ्य के संदर्भ में आप इस पाठ्यक्रम की इकाइयों में जानेंगे। इकाइयों में साहित्य की इन महत्वपूर्ण विधाओं को समझने के लिए उनको सरल भाषा में विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। किसी भी विधा की रचना का वाचन करते हुए यह आवश्यक होता है कि आप उसके कथानक या अंतर्वस्तु को समझें। मूल निबंध पर विचार करने के क्रम में हमने उस निबंध के विविध पक्षों को उद्घाटित करने का प्रयास किया है, जिससे आप निबंध को ठीक तरह से समझ सकें तथा उसकी विशेषताओं से परिचित हो सकें।

इस पाठ्यक्रम में कुल तीन खंड है। प्रथम खंड हिंदी गद्य के स्वरूप और विकास से संबद्ध है। इस खंड में दो इकाइयाँ हैं, जिनमें हिंदी गद्य के विकास का संक्षिप्त परिचय देने के साथ–साथ हिंदी की विविध गद्य विधाओं का भी परिचय प्रस्तुत किया गया है। शेष दो खंडों में क्रमशः उपन्यास, कहानी तथा निबंध को पढ़ाया गया है। आप इन सब विधाओं से संबंधित कुछ विशिष्ट रचनाओं का समग्रतः अध्ययन भी करेंगे और उनकी विशेषताओं के बारे में भी जानेंगे। साहित्य की महत्वपूर्ण विधाओं को समझने के लिए उनको सरल भाषा में विश्लेषित और व्याख्यायित करने का प्रयत्न किया गया है। हमारा प्रयत्न है कि इस पाठ्यक्रम की सहायता से आप गद्य साहित्य की विविध विधाओं को भली–भाँति समझ लें और उनका आस्वादन कर सकें। पाठ्यक्रम में प्रस्तावित तीनों निबंध आपको किसी भी पुस्तकालय से उपलब्ध हो सकते हैं। आप उनका वाचन करें तथा अध्ययन में किसी भी प्रकार की कठिनाई आने पर अपने परामर्शदाता की सहायता से सुलझाने का प्रयास करें।

शुभकामनाओं के साथ!

खंड 1 परिचय

'हिंदी गद्य साहित्य' के पाठ्यक्रम के अंतर्गत आप प्रथम खंड का अध्ययन करने जा रहे हैं। प्रस्तुत खंड में दो इकाइयाँ हैं।

इकाई 1: हिंदी गद्य का विकास
इकाई 2: हिंदी गद्य की विविध विधाएँ

इस कार्यक्रम के अध्ययन हेतु जिन छात्रों ने हिंदी विषय का चयन किया है और प्रस्तुत पाठ्यक्रम का अध्ययन कर रहे हैं उनके लिए यह जरूरी है कि वे हिंदी गद्य के विकास के साथ–साथ उसकी विविध विधाओं का भी परिचय प्राप्त करें। हिंदी गद्य साहित्य की विशिष्ट रचनाओं का अध्ययन करने से पूर्व छात्रों का हिंदी गद्य की विविध विशिष्ट विधाओं के रूपों और विशेषताओं से भी परिचित होना आवश्यक है। इन्हीं बिन्दुओं को दृष्टि में रखते हुए इस खंड में दो इकाइयाँ उपर्युक्त विषयों से संबद्ध हैं। खंड की पहली इकाई में आप हिंदी गद्य की पृष्ठभूमि और उसके विकास के कारणों का अध्ययन करेंगे।

खंड की दूसरी इकाई हिंदी 'गद्य की विविध विधाओं' से संबंधित है। इस इकाई में हिंदी गद्य की विविध विधाओं, विशेष रूप से उपन्यास, कहानी और निबंध के स्वरूप और विशेषताओं की चर्चा की गई है। इस पाठ्यक्रम में आप हिंदी गद्य की तीन विधाओं उपन्यास, कहानी और निबंध के साहित्य का अध्ययन करेंगे, इसलिए इस इकाई में इन विधाओं पर विस्तार से विचार किया गया है।

खंड के अंत में कुछ उपयोगी पुस्तकों के नाम दिए जा रहे हैं। इन विषयों का गहन और अधिक विस्तार से अध्ययन करने के लिए ये पुस्तकें आपके लिए लाभकारी होंगी।

इकाई 1 हिंदी गद्य का विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 गद्य साहित्य

1.3 हिंदी गद्य की पृष्ठभूमि

1.3.1 ब्रजभाषा गद्य

1.3.2 खड़ी बोली गद्य

1.4 हिंदी गद्य का विकास

1.4.1 हिंदी गद्य के विकास के कारण

1.4.2 प्रारंभिक गद्य लेखन

1.4.3 अंग्रेजों की भाषा नीति

1.5 भारतेन्दु युग (1875-1900)

1.6 द्विवेदी युग (1900-1920)

1.7 प्रेमचंद और उनके बाद

1.8 सारांश

1.9 उपयोगी पुस्तकें

1.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

आप 'हिंदी गद्य साहित्य' पाठ्यक्रम की पहली इकाई पढ़ने जा रहे हैं। इस इकाई में हिंदी गद्य के विकास का परिचय दिया गया है। हिंदी गद्य साहित्य की विधाओं का अध्ययन करने से पूर्व हिंदी गद्य साहित्य के स्वरूप, विकास तथा विधाओं की जानकारी प्राप्त करना आपके लिए उपयोगी होगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- गद्य और पद्य में अंतर कर सकेंगे;
- अंग्रेजों के शासन के दौरान भाषा संबंधी विभिन्न दृष्टिकोणों को समझ सकेंगे;
- खड़ी बोली गद्य की आरंभिक स्थितियों का उल्लेख कर सकेंगे;
- भारतेन्दु और द्विवेदी युग के गद्य साहित्य के स्वरूप को स्पष्ट कर सकेंगे;
- प्रेमचंद और उनके बाद के कथा साहित्य के विकास को संक्षेप में समझा सकेंगे; और
- हिंदी के गद्य रचनाकारों के योगदान का उल्लेख कर सकेंगे।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हिंदी गद्य के आरंभ, विस्तार और संक्षिप्त विकास की जानकारी दी गई है। हिंदी साहित्य का इतिहास एक हजार साल से अधिक का है। इसे प्रायः चार खंडों में विभाजित किया जाता है। आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल। आधुनिक काल से पूर्व का साहित्य मुख्यतः पद्य में है। गद्य की कुछ रचनाएँ अवश्य प्राप्त हुई हैं, लेकिन हिंदी साहित्य परंपरा में उनका विशेष महत्त्व नहीं है। गद्य की वास्तविक शुरूआत आधुनिक युग में ही हुई। ऐसा क्यों हुआ और गद्य के विकास की दशा क्या रही, इसी पर हम इस इकाई में विचार करेंगे।

1.2 गद्य साहित्य

आप उपन्यास पढ़ते होंगे, कहानियाँ भी आपने पढ़ी होंगी या लेख भी पढ़े होंगे, किन्तु क्या आपने कभी सोचा है कि साहित्य के इन रूपों का विकास कैसे हुआ? इस इकाई में हम इस बिन्दु पर विचार करेंगे कि साहित्य के अंतर्गत गद्य का विकास किस प्रकार हुआ। आपने कबीर, तुलसीदास, सूरदास, मीरा आदि की रचनाएँ पढ़ी होंगी। आपने अनुभव किया होगा कि उपन्यास और कहानी से कबीर, सूर, मीरा और तुलसी की रचनाएँ भिन्न प्रकार की हैं। साहित्यिक भाषा में कबीर, सूर, मीरा आदि की रचनाओं को छंदोबद्ध रचना या पद्य या काव्य कहा जाता है, जबकि उपन्यास, कहानी, निबंध आदि को गद्य।

छन्दोबद्ध रचना में गेयता तथा लय होती है, जबकि गद्य में भाषा व्याकरण के अनुरूप होती है। समस्त विश्व साहित्य में आरंभ से ही काव्य-रचना का प्रमुख स्थान रहा है। भारत में जहाँ 'रामायण', 'महाभारत' जैसे महाकाव्यों की रचना हुई, वहाँ यूनान में 'इलियड', 'ओडिसी' आदि लिखे गए। काव्य के अलावा नाटक भी लिखे गए। उनमें भी काव्य की भाषा का प्रयोग अधिक हुआ है। प्रश्न उठता है कि आधुनिक युग से पूर्व गद्य की बजाय पद्य में ही रचना क्यों होती रही? वास्तव में अपनी गेयता, छन्दोबद्धता और लय के कारण काव्य को याद रखना सरल था। पहले ज़माने में मुद्रण की सुविधाएँ कम थीं, इसलिए मौखिक परंपरा से पीढ़ी-दर-पीढ़ी साहित्य को आगे बढ़ाने में काव्य की भाषा सहायक थी। प्राचीन काल में गद्य में साहित्य-रचना न होती हो, यह बात नहीं है, पर इस प्रकार की रचनाएँ संख्या में काफी कम थीं। भावों की अभिव्यक्ति के लिए जहाँ काव्य-रचना की जाती थी वहाँ सैद्धांतिक निरूपण के लिए गद्य का भी प्रयोग होता था। संस्कृत साहित्य में भी गद्य का प्रयोग हुआ है। बाणभट्ट ने 'कादम्बरी' की रचना गद्य में ही की थी। आप सब 'पंचतंत्र' से भी परिचित होंगे। इसके लेखक थे, विष्णु शर्मा। यह ग्रंथ भी गद्य में रचित है।

अब आपके मन में यह प्रश्न उठ रहा होगा कि आधुनिक युग में काव्य की प्रमुखता के बावजूद गद्य में लेखन क्यों शुरू हुआ और इसके क्या-क्या कारण थे? शुरू से ही आपस में विचार-विनिमय के लिए एक अलग प्रकार की भाषा का प्रयोग होता था। यह साधारण बोल-चाल की भाषा थी और इसका रूप काव्य से अलग था। भाषा के इसी रूप को गद्य कहा गया था। भाषा का वह रूप जो **उसकी व्याकरणिक संरचना के सर्वाधिक नज़दीक हो, गद्य कहलाता है,** जबकि पद्य में प्रमुखता व्याकरणिक नियमों की नहीं छंद, लय और भाव की होती है। गद्य में लेखन वैसे तो प्राचीनकाल से ही होता आ रहा था लेकिन इसकी प्रमुखता मुद्रण प्रणाली के अस्तित्व में आने और

समाचारपत्रों के प्रकाशित होने के बाद ही हुई। भारत में मुद्रण की आधुनिक प्रणाली का आरंभ अंग्रेजों के आने के बाद हुआ और समाचारपत्रों का आरंभ इसके बाद हुआ। मुद्रण की आधुनिक प्रणाली और यातायात के तेज साधनों ने समाचारपत्रों, पत्रिकाओं और पुस्तकों के प्रकाशन को प्रोत्साहित किया। इनके लिए गद्य की भाषा ही उपयुक्त थी। मुद्रण प्रणाली और यातायात के आधुनिक साधनों का जैसे-जैसे फैलाव होता गया, वैसे-वैसे गद्य लेखन को भी प्रोत्साहन मिलता गया।

1.3 हिंदी गद्य की पृष्ठभूमि

आधुनिक काल के आरंभ से पहले अर्थात् उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व अन्य भारतीय भाषाओं की तरह हिंदी-भाषा में भी गद्य की रचनाएँ बहुत अधिक नहीं थीं। आज खड़ी बोली, साहित्य की भाषा है, किंतु पूर्व आधुनिक काल यानी सोलहवीं-सत्रहवीं सदी में उसका साहित्य में प्रयोग बहुत समय तक नगण्य-सा ही रहा, क्योंकि उस समय ब्रजभाषा साहित्य की भाषा थी। लम्बे समय तक साहित्यिक रचनाएँ ब्रजभाषा में ही होती रहीं। भाव-विचार की अभिव्यक्ति के लिए काव्य की रचना होती थी, लेकिन आपस में विचार-विनिमय के लिए एक अलग प्रकार की भाषा का प्रयोग होता था। बोलचाल की यह भाषा गद्यात्मक थी। ब्रजभाषा के बोलचाल के इस रूप का प्रयोग गद्यात्मक रचनाओं में होता था। आरंभिक हिंदी गद्य की दृष्टि से ऐसी रचनाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आइए, हम ऐसी प्रारंभिक गद्य रचनाओं के रूप से परिचय प्राप्त करें।

1.3.1 ब्रजभाषा गद्य

ब्रजभाषा साहित्यिक भाषा थी और भाव-विचार को व्यक्त करने के लिए पद्य में इसका प्रयोग होता था, लेकिन इस भाषा के बोलचाल के रूप का प्रयोग भी साहित्य में होता था। आप यह तो जानते ही होंगे कि विद्वानों की भाषा आम आदमियों की भाषा से अलग होती है और वे आपस में एक अलग प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं। प्रायः साहित्य में ऐसी ही भाषा का प्रयोग होता है। इसके ठीक विपरीत जनसाधारण की भाषा बोल-चाल की होती है। इसलिए जब कोई विद्वान या उपदेशक अपने मत का प्रचार करना चाहता है तो उसे जनसाधारण की भाषा में अपने मत या विचार को समझाना पड़ता है। इस प्रकार गद्य के प्रणयन का एक कारण यह भी है कि इसके प्रयोग से लेखक अपना संदेश जनता तक सुगमता से पहुँचा सकता है। आरंभिक ब्रजभाषा-गद्य का प्रयोग इसी उद्देश्य से हुआ है। काव्य ग्रंथों को आम जनता तक पहुँचाने के लिए टीकाएँ लिखी गईं। ये टीकाएँ गद्य की भाषा में दिखाई पड़ती हैं। उस काल की गद्य-रचना का एक उदाहरण देखिए :

श्री गुरू परमानंद तिनको दंडवत है। हैं कैसे परमानंद, आनंदस्वरूप हैं सरीर जिन्हि का जिन्हि के नित्य तें शरीर चेतन्नि अरू आनंदमय होतु है।
('हिंदी साहित्य का इतिहास' रामचन्द्र शुक्ल पृ. 222, सं.-संवत् 2048, से उद्धृत)

उपरिलिखित गद्य रचना का काल संवत् 1400 के आस-पास माना जाता है।

इस उदाहरण से यह स्पष्ट है कि पद्य के साथ गद्य का लेखन भी होता रहता था। ब्रजभाषा गद्य का प्रामाणिक रूप 17वीं शताब्दी उत्तरार्ध की दो रचनाओं-'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' तथा 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' (औरग़जेब के काल की

रचना) में मिलता है। इनमें वैष्णव भक्तों की महिमा व्यक्त करने वाली कथाएँ लिखी गई हैं। इनकी रचना भक्तिभाव के प्रचार के लिए की गई थी।

इसी प्रकार वि. संवत् 1660 के आस-पास भक्त नाभादास की रचना 'अष्टयाम' में ब्रजभाषा गद्य का जो रूप देखने को मिलता है उसकी भाषा भी सामान्य बोल-चाल की ही है, हालाँकि वह कुछ अधिक परिमार्जित है। ध्यान देने की बात यह है कि उस समय ब्रजभाषा में गद्य की रचना छिटपुट रूप में ही होती थी-इसकी कोई विकसित परंपरा नहीं मिलती। इसका एक मुख्य कारण है ब्रजभाषा में गद्य की क्षमता का विकास न हो पाना। हुआ यह कि ब्रजभाषा सीमित ब्रज क्षेत्र की भाषा थी। विचारों के आदान-प्रदान के लिए सम्पर्क भाषा के रूप में ब्रजभाषा अपने सीमित क्षेत्र में ही बनी रही। ब्रज क्षेत्र से बाहर संपर्क भाषा के रूप में इसका विकास नहीं हो पाया। इसलिए इसमें गद्य की क्षमता का भी विकास नहीं हो पाया। यही कारण है कि ब्रजभाषा काव्य के लिए ही बनी रही और खड़ी बोली ने गद्य का स्थान ले लिया जो पहले से संपर्क भाषा के रूप में अन्य क्षेत्रों में भी फैल रही थी।

1.3.2 खड़ी बोली गद्य

हमने देखा कि किन कारणों से ब्रजभाषा में गद्य की परंपरा आगे नहीं बढ़ पाई। अब हम देखेंगे कि खड़ी बोली में गद्य का विकास किन कारणों से हुआ। खड़ी बोली जनसाधारण के बोल-चाल की भाषा थी। धीरे-धीरे साहित्य में इसका प्रयोग होने लगा और गद्य की रचनाएँ भी इसमें होने लगी। तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति ने खड़ी बोली के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

चौदहवीं शताब्दी में खड़ी बोली दिल्ली और उसके आस-पास के क्षेत्र में बोली जाने लगी थी। मुगलकाल में शासन की सुविधा के लिए और जनता से सम्पर्क बनाने के लिए खड़ी बोली का प्रयोग प्रारंभ हुआ। मुगल भी बाहर से आए थे। उनकी मातृ-भाषा तुर्की थी, लेकिन राजकाज की भाषा के रूप में उन्होंने फारसी का उपयोग किया था। जब खड़ी बोली का प्रयोग संपर्क भाषा के रूप में शुरू हुआ तो फारसी मिश्रित खड़ी बोली से बोल-चाल की नई शैली का जन्म हुआ। पढ़े-लिखे लोग बोल-चाल के इस मिश्रित रूप को फारसी लिपि में लिखने लगे। इस नई शैली को हिंदुई, हिंदवी, हिंदी, रेख्ता और आगे चलकर उर्दू नाम दिया गया। शायरों ने इसमें शायरी करनी आंरभ की। चौदहवीं शताब्दी में अमीर खुसरो ने खड़ी बोली में पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखीं।

अमीर खुसरो रचित पहेली का एक उदाहरण देखिए :

एक थाल मोती भरा, सबके ऊपर औंधा धरा ।
चारों ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरे।।

अमीर खुसरो के बाद खड़ी बोली का विकास दक्षिण के राज्यों में हुआ। दक्खिनी हिंदी के रूप में वहाँ 14वीं से 18वीं शती तक अनेक साहित्यिक ग्रंथों की रचनाएँ हुई, जिनमें गद्य की रचनाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ख्वाजा बन्दा नवाज गैसू दराज (1322-1433), शाह मीराँ जी (-1496), बुरहाद्दीन जानम (1544-1583) और मुल्ला वजही जैसे साहित्यकारों ने अपनी काव्य रचनाओं के साथ गद्य ग्रंथ भी लिखे। मुल्ला वजही ने 1635ई. में प्रसिद्ध गद्य-ग्रंथ 'सब रस' की रचना की, जिसका आरंभ इस प्रकार से होता है:

''नकल-एक शहर था। शहर का नाउं सीस्तान । इस सीस्तान के बादशाह का नाउं अक्ल, दीन और दुनियां का सारा काम उस तै चलता, इसके हुक्म बाज जरी कई नई हिलता..... वह चार लोकों में इज्ज़त पाए ।''

इस प्रकार दक्खिनी हिंदी में लगातार गद्य साहित्य का विकास होता रहा।

मुग़ल साम्राज्य ने खड़ी बोली के विस्तार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मुग़ल साम्राज्य के विस्तार के साथ-साथ खड़ी बोली का भी विस्तार होता गया। खड़ी बोली मुग़लों के समय में संपर्क भाषा हो गई थी। जब अंतिम शक्तिशाली मुग़ल बादशाह औरंगजेब की मृत्यु हुई तो विशाल साम्राज्य को संगठित रखने की शक्ति बाद के किसी शासक में नहीं रही। दिल्ली, आगरा आदि पश्चिमी शहरों के स्थान पर लखनऊ, पटना, मुर्शिदाबाद आदि पूर्वी शहर समृद्ध हो चले। इसी कारण व्यापार की उन्नति के लिए व्यापारी वर्ग पूर्वी शहरों की ओर जाने लगे। चूँकि खड़ी बोली अब तक संपर्क भाषा बन चुकी थी, इसलिए इन व्यापारियों के साथ खड़ी बोली भी विस्तार पाती गई इस प्रकार खड़ी बोली में गद्य की क्षमता का विकास होने लगा और उसमें गद्य की रचनाएँ होने लगीं।

खड़ी बोली गद्य का प्रामाणिक रूप हमें मुगल बादशाह अकबर के दरबारी कवि गंग की रचना ''चन्द छंद बरनन की महिमा'' में मिलता है। इसका रचना काल सन् 1570 ई. स्वीकार किया गया है। निम्नलिखित उदाहरण में आप दरबारी प्रभावयुक्त, शिष्ट और परिष्कृत खड़ी बोली गद्य का रूप देखेंगे।

''इतना सुनके पातसाह जी श्री अकबरसाहि जी आध सेर सोना नरहरदास चारन को दिया। इनके डेढ़ सेर सोना हो गया। रास बंचना पूरन भया। आम खास़ बरखास हुआ।

(हिंदी साहित्य का इतिहास', रामचंद्र शुक्ल, पृ. 225)

साहित्य में स्थान बनाने के लिए किसी भाषा को समय की अपेक्षा होती है। खड़ी बोली के साथ भी ऐसा ही हुआ। खड़ी बोली गद्य का विकास धीरे-धीरे हो रहा था। सन् 1741 ई. में पटियाला दरबार के 'रामप्रसाद निरंजनी' द्वारा रचित 'भाषा योग वासिष्ठ' से हम इस विकास की शृंखला को जोड़ सकते हैं। आप इस उदाहरण को देखें :

'हे राम जी, जो पुरुष अभिमानी नहीं है वह शरीर के इष्ट-अनिष्ट में रागद्वेष नहीं करता क्योंकि उसकी शुद्ध वासना है। मलीन वासना जन्मों का कारण है। ऐसी वासना को छोड़कर जब तुम स्थित होंगे तब तुम कर्त्ता हुये भी निर्लेप रहोगे।

('हिंदी साहित्य का इतिहास', रामचंद्र शुक्ल पृ. 226)

इस उदाहरण को देखकर क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि यह आज की परिमार्जित गद्य रचना के काफी निकट है। खड़ी बोली कम समय में ही साहित्य में स्थान पा गई और तेजी से इसमें गद्य का विकास हुआ। आगे हम इस पर विचार करेंगे कि किन-किन कारणों से इतनी शीघ्रता से इसका विकास हुआ।

बोध प्रश्न

आपने अब तक खड़ी बोली गद्य की पृष्ठभूमि का परिचय प्राप्त किया है। अब नीचे कुछ बोध प्रश्न दिये जा रहे हैं, इन प्रश्नों को ध्यानपूर्वक पढ़िए और उनका उत्तर

दीजिए। पाठ के अंत में दिये गए उत्तरों से इनका मिलान कीजिए। इससे आपको मालूम हो सकेगा कि आपने जो पढ़ा है, उसे ठीक से समझा है या नहीं। अगर आप सही उत्तर न दे सकें तो पाठ को दोबारा पढ़िए।

1 आधुनिक काल से पूर्व साहित्य की रचना काव्य में होती थी। नीचे इसके विभिन्न कारण बताए गए हैं। सही कारण के सामने (✓) का और गलत के आगे (×) का निशान लगाइए।

i) काव्य में गेयता होती है, इससे उसको याद रखना आसान होता है।

ii) आधुनिक युग से पूर्व मुद्रण की आधुनिक प्रणाली का विकास नहीं हुआ था।

iii) काव्य अभिव्यक्ति का सबसे अक्षम रूप है।

iv) आधुनिक युग से पूर्व पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ नहीं हुआ था।

2 ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली को गद्य भाषा के रूप में स्वीकार किया गया क्योंकि (सही विकल्प के सामने (✓) का चिन्ह लगाइए)

i) खड़ी बोली संपर्क भाषा के रूप में हिंदी क्षेत्र में व्यवहृत होने लगी थी।

ii) ब्रजभाषा काव्य की भाषा थी।

iii) पद्य और गद्य की भाषा अलग-अलग होती है।

iv) खड़ी बोली को राज्याश्रय प्राप्त था।

3 नीचे कुछ पुस्तकों के नाम दिए गए हैं, इनकी भाषा का नाम लिखिए।

i) दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता ( )

ii) भाषा योग वासिष्ठ ( )

iii) अष्टयाम ( )

iv) चंद छंद बरनन की महिमा ( )

1.4 हिंदी गद्य का विकास

खड़ी बोली गद्य का जो रूप आज हमारे सामने है वह सहज ही विकसित नहीं हो गया था। इसके विकास में परिस्थितियों, संस्थाओं और व्यक्तियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही हैं। इनमें से कुछ कारणों की संक्षिप्त चर्चा हम आगे करने जा रहे हैं।

1.4.1 हिंदी गद्य के विकास के कारण

अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना के साथ भारत में परिवर्तनों का जो सिलसिला आरंभ हुआ, उसने भारतीय जनजीवन पर बहुत व्यापक असर छोड़ा। ये परिवर्तन किसी एक क्षेत्र से संबद्ध नहीं थे। इनमें से कई परिवर्तनों का सीधा संबंध हिंदी गद्य के विकास से है। नीचे इनका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है :

ईसाई मिशनरियाँ : आप जानते हैं हमारा देश धर्मनिरपेक्ष है और यहाँ हिन्दू, मुसलमान ही नहीं, ईसाई धर्म को मानने वाले भी बहुत बड़ी संख्या में हैं। दक्षिण भारत के केरल और पूर्वी भारत के कई छोटे प्रदेशों में ईसाई धर्म को मानने वालों की संख्या काफी अधिक है। मुगलों के शासन के उत्तर काल में ईसाई धर्म प्रचारक इस देश में आए थे। जब अंग्रेजों ने भारत को पराधीन बनाया और अपना शासन स्थापित किया तो ईसाई धर्म प्रचारकों की गतिविधियाँ भी तेज हो गई। धर्म प्रचार के लिए उन्होंने भारतीय भाषाओं का सहारा लिया। इनमें हिंदी भी एक थी। उन्नीसवीं सदी में इन प्रचारकों ने ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिए हिंदी गद्य में कई पुस्तकें तैयार कीं। इस प्रकार उन्होंने हिंदी गद्य के विकास में योगदान दिया। गद्य के विकास की आरंभिक चर्चा में आपने देखा है कि जनता तक अपना संदेश पहुँचाने के लिए बोलचाल के गद्य का प्रयोग होता था। ईसाई धर्म प्रचारकों ने भी जनता की भाषा में प्रचार शुरू किया। हिंदी गद्य में छोटी-छोटी प्रचार-पुस्तिकाओं तथा धर्मग्रंथ 'बाइबिल' के हिंदी-अनुवाद से ईसाई धर्म के प्रचार को जहाँ गति मिली, वहाँ प्रकारान्तर से इससे हिंदी गद्य के विकास में सहायता भी मिली।

नवीन आविष्कार : अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य को सुदृढ़ करने के लिए मुद्रण, यातायात और संचार के नए साधनों का इस्तेमाल किया। ईस्ट इंडिया कंपनी ने सन् 1844 से 1856 के बीच देश के दूर-दूर के क्षेत्रों को रेल और तार से जोड़ दिया। मुद्रण, तार और रेल ने जनजीवन में बड़ा परिवर्तन ला दिया। मुद्रण यंत्रालयों (प्रिंटिंग प्रेस) की स्थापना ने हिंदी सहित विभिन्न भाषाओं में पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों का प्रकाशन संभव बनाया। यातायात के तेज साधनों ने इन पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों को रेल तथा अन्य तेज वाहनों से जल्दी-से-जल्दी दूसरे शहरों तक पहुँचाना आरंभ किया। तार की सुविधा से समाचारों को जल्दी प्राप्त करना और भेजना शुरू हुआ। इसी से बड़ी मात्रा में समाचारपत्रों का प्रकाशन और प्रसारण संभव हुआ। और इसी कारण गद्य लेखन का तेजी से विस्तार हुआ।

शिक्षा का विस्तार : सन् 1834 में लार्ड मैकाले में ब्रिटिश पार्लियामेंट के सामने भारत में अंग्रेजी शिक्षा को प्रचारित करने की आवश्यकता पेश की। सन् 1835 में अंग्रेजी भाषा के माध्यम से नए ढंग की शिक्षा देने की शुरूआत की गई। इससे पहले तक भारत में शिक्षा संस्कृत और फ़ारसी के माध्यम से दी जाती थी। राजा राममोहन राय अंग्रेजी शिक्षा के पक्षधर थे क्योंकि उनका विचार था कि संस्कृत और फारसी की शिक्षा से भारत नई युग में प्रवेश नहीं कर सकता। अंग्रेजी शिक्षा का लाभ भी हुआ। इससे भारतीयों को पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति की गहरी जानकारी प्राप्त हुई। इससे भारतीयों को जहाँ अपनी परंपरा को नई दृष्टि से देखने का अवसर मिला, वहाँ अपनी संस्कृति और राष्ट्रीय परंपरा के प्रति स्वाभिमान भी जाग्रत हुआ। शिक्षा के लिए जिन नए स्कूलों और कालेजों की स्थापना की गई थी उनमें अंग्रेजी के साथ-साथ कहीं-कहीं हिंदी-उर्दू की शिक्षा भी दी जाती थी। सन् 1800 में स्थापित फोर्ट विलियम कालेज में सन् 1803 से हिंदी-उर्दू की पढ़ाई आरम्भ हुई और सन् 1824 से हिंदी की पढ़ाई का विशेष प्रबंध हुआ। इस कॉलेज के संचालकों की नीति हिंदी के बहुत अनुकूल नहीं थी। सन् 1823 में आगरा कालेज की स्थापना हुई ओर उसमें हिंदी शिक्षा की व्यवस्था की गई। सन् 1817 ई. में 'कलकत्ता स्कूल बुक सोसायटी' और सन् 1833 में 'आगरा स्कूल बुक सोसायटी' की स्थापना हुई। इन संस्थाओं ने अच्छे-अच्छे पाठ्य ग्रंथ तैयार करवाए। इस तरह शिक्षा के विस्तार ने भी हिंदी गद्य को विकसित करने में मदद की।

समाज-सुधार आंदोलन : 19वीं सदी में कई समाज-सुधार आंदोलनों की शुरूआत हुई। इन आंदोलनों का मुख्य उद्देश्य था भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करना तथा जनता में अपने देश और धर्म के प्रति चेतना जगाना। चूँकि जनता तक अपना संदेश पहुँचाने के लिए जनता की भाषा आवश्यक थी। अतः जिन नेताओं ने इस कार्य को शुरू किया, उन्होंने जनता की भाषा में अपने मत का प्रचार किया। राजा राममोहन राय ने 'ब्रह्म समाज' द्वारा यह कार्य किया। स्वामी दयानंद सरस्वती ने 'आर्य समाज' की स्थापना की और अपनी पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिंदी गद्य में ही की। श्रद्धा राम फुल्लौरी तथा नवीन चंद्र राय ने भी समाज सुधार के लिए हिंदी गद्य का ही सहारा लिया। पंजाब में हिंदी प्रचार के लिए इन्होंने पत्र निकाला और गद्य में रचनाएँ भी कीं।

हिंदी गद्य

पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन : मुद्रण की सुविधा से पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन सरल हो गया। 30 मई सन् 1826 ई. में पंडित जुगलकिशोर शुक्ल ने कलकत्ता से हिंदी में 'उदंत मार्तण्ड' पत्र का प्रकाशन आरंभ किया। यह हिंदी का पहला समाचार-पत्र था। यह साप्ताहिक पत्र था। 'उदंत मार्तण्ड' नवयुग के आगमन की सूचना लेकर आया। उस समय हिंदी पाठकों की संख्या बहुत कम थी। लगभग डेढ़ वर्ष निकल कर 4 दिसम्बर 1827 ई. को यह पत्र बंद हो गया। पत्र निकालने का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए पत्र ने अपने पहले अंक में लिखा था :

यह उदंतमार्तण्ड अब पहले पहल हिंदुस्तानियों के हित के हेतु जो आज तक किसी ने नहीं चलाया, पर अंगरेजी ओ पारसी ओ बँगले में जो समाचार का कागज छपता है उसका सुख उन बोलियों के जानने ओ पढ़नेवालों को ही होता है। इससे सत्य समाचार हिंदुस्तानी लोग देखकर आप पढ़ ओ समझ लेयँ ओ पराई अपेक्षा न करें ओ अपने भाषे की उपज न छोड़ें इसलिए .....

(हिंदी साहित्य का इतिहास से उद्धृत, पृ. 234)

हिंदी का दूसरा पत्र 'बंगदूत' का प्रकाशन 9 मई सन् 1829 को कलकत्ता में हुआ था। कलकत्ता से ही 1834 ई. में 'प्रजामित्र' नाम का तीसरा हिंदी पत्र प्रकाशित हुआ। हिंदी भाषी क्षेत्र से पहला समाचारपत्र 1844 में निकला था, इसका नाम 'बनारस' था और इसे राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' ने निकाला था। 1846 ई. में मौलवी नासिरुद्दीन के संपादकत्व में 'मार्तण्ड' नामक एक और पत्र प्रकाशित हुआ। इस तरह 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में कई समाचार-पत्र प्रकाशित हुए। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में तो पत्र-पत्रिकाओं की संख्या काफी बढ़ गई। पत्र-पत्रिकाओं ने हिंदी गद्य को विकसित और परिमार्जित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1.4.2 प्रारंभिक गद्य लेखन

सन् 1800 में अंग्रेजों के प्रयास से कलकत्ता में फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना हुई। सन् 1803 ई. में इस कालेज के हिंदी-उर्दू अध्यापक जान गिलक्राइस्ट ने हिंदी और उर्दू में पुस्तकें लिखाने का प्रयत्न किया। इन्होंने कई मुंशियों की नियुक्ति की। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार ''जान गिलक्राइस्ट प्रधान रूप से हिंदुस्तानी या उर्दू के पक्षपाती थे, परंतु वे जानते थे कि उस भाषा की आधारभूत भाषा हिंदवी या हिंदुई थी। इसी आधारभूत भाषा की जानकारी के लिए उन्होंने कुछ 'भाषा मुंशियों' की

सहायता प्राप्त की।'' (हिंदी साहित्यः उद्‌भव और विकास पृ. 226) भाषा मुंशियों में श्री लल्लूलालजी और पं. सदल मिश्र ने हिंदी में गद्य पुस्तकें लिखीं।

इसी समय दिल्ली निवासी मुंशी सदासुखलाल जी ने बहुत ही सुंदर भाषा में भागवत की कथा का 'सुखसागर' नाम से भाषांतर किया और लखनऊ के मुंशी इंशाअल्ला खाँ ने 'रानी केतकी की कहानी' नाम से एक ऐसी कथा लिखी, जिसमें अरबी-फारसी के शब्दों को हटाकर शुद्ध हिंदी लिखने की कोशिश की गई थी। हिंदी गद्य के आरंभिक विकास में इन चारों लेखकों का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

मुंशी सदासुखलाल ''नियाज'' (1746-1824) उर्दू और फ़ारसी के अच्छे लेखक और कवि थे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार ''इनकी भाषा कुछ निखरी हुई और सुव्यवस्थित है, पर तत्कालीन प्रचलित पंडिताऊ प्रयोग भी इनमें मिल जाते हैं।'' 'सुखसागर' के अतिरिक्त 'विष्णु पुराण' के प्रसंगों के आधार पर मुंशी सदासुखलाल ने एक अपूर्ण ग्रंथ की भी रचना की थी। सदासुखलाल जी की भाषा में सहजता और स्वाभाविकता है। इनकी भाषा का यह उदाहरण द्रष्टव्य हैः

विद्या इस हेतु पढ़ते हैं कि तात्पर्य इसका जो सतोवृत्ति है वह प्राप्त हो और उससे निज स्वरूप में लय हूजिए। इस हेतु नहीं पढ़ते हैं कि चतुराई की बातें कहके लोगों को बहकाइए-फुसलाइए और सत्य छिपाइए, व्यभिचार कीजिए और सुरापान कीजिए और मन को, कि तमोवृत्ति से भर रहा है, निर्मल न कीजिए।

(हजारीप्रसाद द्विवेदी जी की पुस्तक से उद्धृत संस्करण : 1952 ई., पृ. 228)

मुंशी इंशाअल्ला खाँ (मृत्यु सन् 1818) ने सन् 1798 और 1803 के बीच 'उदयभान चरित या रानी केतकी की कहानी' की रचना की थी। कहानी लिखने का कारण स्पष्ट करते हुए मुंशीजी ने लिखा थाः

'एक दिन बैठे-बैठे यह बात अपने ध्यान में चढ़ी कि कोई कहानी ऐसी कहिए कि जिसमें हिंदवी छुट और किसी बोली का पुट न मिले, तब जाके मेरा जी फूल की कली के रूप में खिले। बाहर की बोली और गँवारी कुछ उसके बीच में न हो। ... बस, जैसे भले लोग अच्छों से अच्छे आपस में बोलते-चालते हैं ज्यों का त्यों वही सब डौल रहे और छाँव किसी की न हो। यह नहीं होने का।''

('हिंदी साहित्य का इतिहास' से उद्धृत, पृ. 229)

इंशाअल्ला खाँ ने अपनी भाषा को बाहर की बोली (अरबी, फारसी, तुर्की), गँवारी (ब्रजभाषा, अवधी आदि) और भाखापन (संस्कृत शब्दों का मेल) से मुक्त रखने की प्रतिज्ञा की थी किंतु उनके वाक्य विन्यास पर फारसी का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। शुक्ल जी के अनुसार ''*आरंभकाल के चारों लेखकों में इंशा की भाषा सबसे चटकीली, मटकीली, मुहावरेदार और चलती है।*'' (वही पृ. 229) उनकी भाषा का एक उदाहरण देखिए :

इस बात पर पानी डाल दो नही तो पछताओगी और अपना किया पाओगी। मुझसे कुछ न हो सकेगा। तुम्हारी जो कुछ अच्छी बात होती तो मेरे मुँह से जीते जी न निकलती, पर यह बात मेरे पेट नहीं पच सकती। तुम अभी अल्हड़ हो, तुमने अभी कुछ देखा नहीं।

(''हिंदी साहित्य का इतिहास'' से उद्धृत, पृ. 230)

लल्लूलाल जी (सन् 1763-1825) फोर्ट विलियम कालेज से संबद्ध थे। इन्होंने भागवत के दशम स्कंध की कथा के आधार पर 'प्रेमसागर' की रचना की। इसकी भाषा पर ब्रजभाषा का प्रभाव है। अरबी-फ़ारसी के शब्द इसमें कहीं-कहीं आ गए हैं, किंतु कोशिश इनसे बचने की है। द्विवेदी जी के शब्दों में *''इस ब्रजरंजित खड़ी बोली में भी वह सहज प्रवाह नहीं है जो सदासुखलाल की भाषा में है।'* शुक्ल जी की दृष्टि में इसकी भाषा *''नित्य व्यवहार के अनुकूल नहीं''* है।

पं. सदल मिश्र बिहार के रहने वाले थे और लल्लूलालजी की तरह फोर्ट मिलियम कालेज से संबद्ध थे। इन्होंने 'नासिकेतोपाख्यान' की रचना की। शुक्लजी ने लल्लूलालजी की भाषा से इनकी भाषा की तुलना करते हुए लिखा है कि *"लल्लूलालजी के समान इनकी भाषा में न तो ब्रजभाषा के रूपों की वैसी भरमार है और न परंपरागत काव्य भाषा की पदावली का स्थान-स्थान पर समावेश। इन्होंने व्यवहारोपयोगी भाषा लिखने का प्रयत्न किया है और जहाँ तक हो सकता है, खड़ी बोली का ही व्यवहार किया है।''* सदल मिश्र की भाषा में भी वह साफ सुथरापन नहीं है जो सदासुखलाल के यहाँ है। इनकी भाषा पर पूरबी बोली का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। आधुनिक हिंदी गद्य का जो आभास सदासुखलाल और सदल मिश्र की भाषा में दिखाई देता है, उसी का आगे विकास हुआ है।

1.4.3 अंग्रेज़ों की भाषा नीति

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व यहाँ की राजकाज की भाषा फ़ारसी थी। लार्ड मैकाले के प्रयत्नों से ईस्ट इंडिया कंपनी की सरकार ने सन् 1835 से अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार का कार्य शुरू किया। सन् 1836 ई. तक फ़ारसी ही अदालत की भाषा थी। लेकिन यह भी महसूस किया जा रहा था कि फ़ारसी से आम जनता को काफी परेशानी होती है। इसलिए 1836 ई. में ही एक 'इश्तहारनामे' के द्वारा संयुक्त प्रांत के सदर बोर्ड अदालतों की भाषा 'हिंदी' कर दी गई और कहा गया कि जनता नागरी या फ़ारसी में से किसी भी लिपि में अर्जी दे सकती है। सरकार के इस फैसले का विरोध हुआ और सन् 1837 ई. में अदालतों की भाषा उर्दू कर दी गई। उपर्युक्त तथ्य से स्पष्ट है कि 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक हिंदी के विकास में सरकार की ओर से कोई मदद नहीं मिली। न तो इसे शिक्षा का माध्यम बनाया गया, न अदालतों का और न सरकारी कामकाज का ही। ऐसे समय में भी कुछ लोगों ने हिंदी के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। इनमें राजा शिवप्रसाद 'सितारहिंद' और राजा लक्ष्मणसिंह का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' (सन् 1823-1895)

राजा शिवप्रसाद शिक्षा विभाग में इंस्पेक्टर के पद पर नियुक्त थे। वे हिंदी के पक्षधर थे, लेकिन सरकारी नीति के कारण उसका खुलकर समर्थन नहीं कर सकते थे। सरकारी हलकों में उर्दू को शिष्ट भाषा और हिंदी को गँवारू भाषा माना जाता था। ऐसी परिस्थिति में राजा जी ने ठेठ हिंदी का सहारा लिया। अरबी, फ़ारसी के शब्दों को ग्रहण करने में भी उन्होंने संकोच नहीं किया। उस समय साहित्य के पाठ्यक्रम के लिए पुस्तकें नहीं थीं। राजा शिवप्रसाद ने स्वयं तो कोर्स की पुस्तकें लिखी ही, पंडित श्रीलाल और पंडित वंशीधर को भी इस कार्य पर लगाया। पाठ्यक्रम के लिए उन्होंने कई कहानियों की रचना की जिनमें 'राजा भोज का सपना' के इस उदाहरण में आप देखेंगे कि उन्होंने सरल और चलती हिंदी का प्रयोग किया है :

''वह कौन सा मनुष्य है जिसने महाप्रतापी महाराज भोज का नाम न सुना हो। उसकी महिमा और कीर्ति तो सारे जगत में व्याप्त रही है। बड़े-बड़े महिपाल उसका नाम सुनते ही कांप उठते और बड़े-बड़े भूपति उसके पाँव पर अपना सिर नवाते।''

बाद में राजा साहब उर्दू के पक्षपाती होते गए। ऐसा शायद अंग्रेज अधिकारियों के दबाव के कारण हुआ। फिर भी उनके प्रारंभिक कार्यों से हिंदी गद्य के विकास में सहायता मिली, इसमें कोई संदेह नहीं। सन् 1864 में उन्होंने 'इतिहास तिमिर नाशक' इतिहास ग्रंथ लिखा था। इसका नाम तो संस्कृतनिष्ठ है किंतु भाषा उर्दू के नजदीक है। उन्होंने 'बनारस' नाम का अखबार भी निकाला था। उसकी भाषा भी उर्दूनिष्ठ होती थी।

राजा लक्ष्मणसिंह (सन् 1826-1896)

राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' के भाषा संबंधी दृष्टिकोण की तीव्र प्रतिक्रिया भी हुई। राजा लक्ष्मणसिंह ने हिंदी और उर्दू को दो अलग-अलग भाषाएँ माना। उन्होंने कहा कि *''कुछ अवश्य नहीं है कि अरबी-फ़ारसी के शब्दों के बिना हिंदी न बोली जाय और न हम उस भाषा को हिंदी कहते हैं जिसमें अरबी-फ़ारसी के शब्द भरे हैं।'* आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने राजा लक्ष्मणसिंह की भाषा पर अपना मत प्रकट करते हुए लिखा है कि *''राजा साहब की भाषा में तद्भव शब्दों की मात्रा कम नहीं है। यद्यपि वह आरंभिक हिंदी गद्य का ही नमूना है तथापि उसमें वक्ता और श्रोता के अनुकूल होने की क्षमता है और हमारी विशाल साहित्यिक परंपरा के अनुकूल है। भाषा में अरबी-फ़ारसी के शब्द नहीं के बराबर हैं परंतु वह काव्य की ब्रजभाषा के प्रभाव से एकदम मुक्त नहीं है।''* राजा साहब ने कालिदास के कई ग्रंथों का अनुवाद किया। उसमें 'मेघदूत', 'अभिज्ञानशाकुंतलम्', का 'शकुंतला नाटक' नाम से अनुवाद और 'रघुवंश' का अनुवाद काफी लोकप्रिय हुआ। राजा साहब की भाषा का उदाहरण देखिए।

अनसूया (हौले प्रियवंदा से) सखी! मैं भी इसी सोच विचार में हूँ। अब इससे कुछ पूछूँगी। (प्रकट) महात्मा तुम्हारे मधुर वचनों के विश्वास में आकर मेरा जी यह पूछने को चाहता है कि तुम किस राजवंश के भूषण हो और किस देश की प्रजा को विरह में व्याकुल छोड़ यहाँ पधार हो? क्या कारन है? जिससे तुमने अपने कोमलगात को कठिन तपोवन में आकर पीड़ित किया है?

(हिंदी साहित्य का इतिहास से उद्धृत, पृ. 241)

राजा लक्ष्मण सिंह ने भाषा के प्रश्न के इस कठिन समय में हिंदी का अपना नमूना सामने रखा और हिंदी गद्य को समृद्ध किया। उन्होंने हिंदी भाषा के जिस स्वरूप को प्रोत्साहित किया उससे उर्दू से उसकी दूरी बढ़ी। उर्दूनिष्ठ हिंदी को उन्होंने यहाँ के लोगों के अनुकूल नहीं माना। अतः उन्होंने शुद्ध और संस्कृतनिष्ठ हिंदी को आगे बढ़ाया। इस कार्य के लिए सन् 1841 में उन्होंने 'प्रजाहितैषी' नामक पत्र निकाला।

इस प्रकार हिंदी गद्य के विकास की दृष्टि से उपर्युक्त दोनों महानुभावों का योगदान पर्याप्त महत्त्वपूर्ण है। भाषा के भावी रूप का आभास इनकी रचनाओं में मिलता है। ऐसे समय में किसी ऐसे प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति की आवश्यकता थी जो भाषा को सुव्यवस्थित और पारिमार्जित कर सके। इस आवश्यकता की पूर्ति भारतेंदु हरिश्चंद्र ने की। वे युग प्रवर्तक साहित्यकार थे।

राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद और राजा लक्ष्मणसिंह के अतिरिक्त भी कई लोगों ने हिंदी गद्य के विकास में योग दिया। उन्होंने अंग्रेजी से अनुवाद किए और पाठ्य पुस्तकें तैयार कीं। इनमें रामप्रसाद त्रिपाठी, मथुराप्रसाद मिश्र, ब्रजवासी दास, बिहारीलाल चौबे, शिवशंकर, काशीनाथ खत्री, रामप्रसाद दुबे आदि प्रमुख हैं। हिंदी के प्रचार-प्रसार में आर्य समाज के योगदान को भी नहीं भुलाया जा सकता। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है स्वामी दयानंद सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिंदी गद्य में ही की थी, यद्यपि वे स्वयं गुजराती भाषी थे। आर्य समाज ने हिंदू धर्म की कुरीतियों को दूर करने और ईसाई धर्म प्रचारकों के प्रभाव को निष्प्राण करने का प्रयत्न किया। इसके लिए आर्य समाज के प्रचारकों ने हिंदी भाषा का सहारा लिया। शुरुआती दौर में आर्य समाज का प्रभाव पंजाब में अधिक था। स्वामी दयानंद के प्रयत्नों से पंजाब में हिंदी और संस्कृत को नवजीवन प्राप्त हुआ। लेकिन इससे पूर्व ही बाबू नवीनचंद्र राय और श्रद्धाराम फुल्लौरी ने पंजाब में हिंदी के लिए अथक प्रयत्न किया था।

बाबू नवीनचंद्र राय ने सन् 1863 और सन् 1880 के बीच भिन्न-भिन्न विषयों की बहुत-सी हिंदी पुस्तकें तैयार कीं ओर दूसरों से तैयार कराईं। नवीनचंद्र राय ने ब्रह्म समाज के सिद्धांतों के प्रचार के उद्देश्य से कई पत्रिकाएँ निकालीं जिनमें 'ज्ञानदायिनी' पत्रिका (सन् 1867) उल्लेखनीय है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 302) बाबू नवीनचंद्र राय का दृष्टिकोण उर्दू के प्रति अनुकूल नहीं था और उन्होंने उसका लगातार विरोध किया।

पंजाब में हिंदी को प्रचारित करने में दूसरा महत्त्वपूर्ण नाम पं. श्रद्धाराम फुल्लौरी का था। इन्होंने भी अपने प्रचार द्वारा ईसाई धर्म के प्रभाव को निस्तेज करने का प्रयास किया और धार्मिक और सामाजिक जागृति फैलाने का कार्य किया। श्रद्धाराम जी ने 'सत्यामृत प्रवाह' नाम का एक सिद्धांत ग्रंथ लिखा था जिसकी भाषा बहुत साफ और प्रौढ़ है। उन्होंने 'आत्म चिकित्सा', 'तत्वदीपक', 'धर्म-रक्षा', 'उपदेश संग्रह' आदि पुस्तकें लिखी थीं और 'भाग्यवती' नाम का एक सामाजिक उपन्यास भी लिखा था। यह उपन्यास सन् 1873 ई. में प्रकाशित हुआ था। इस प्रकार 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध तक आते-आते हिंदी गद्य का व्यापक व्यवहार होने लगा था और साहित्य रचना के लिए आवश्यक ज़मीन तैयार हो चुकी थी। ऐसे समय में भारतेंदु हरिश्चंद्र जैसे महान् व्यक्तित्व का आगमन हुआ जिनके प्रयासों से हिंदी गद्य को एक नई दिशा और ऊर्जा प्राप्त हुई।

बोध प्रश्न

4. नीचे हिंदी गद्य के विकास के कुछ कारण बताए गए हैं, इनमें से एक कारण सही नहीं है, बताइए।
   i) ईसाई धर्म प्रचारकों का योगदान
   ii) मुद्रण प्रणाली की शुरूआत
   iii) अंग्रेज़ सरकार का विशेष संरक्षण
   iv) पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन ( )
5. राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद
   i) उर्दू मिश्रित हिंदी के पक्षधर थे।
   ii) संस्कृतनिष्ठ हिंदी के पक्षधर थे।

iii) ब्रजभाषा मिश्रित हिंदी के पक्षधर थे।

iv) फ़ारसी के पक्षधर थे। ( )

6. ''उदंत मार्तण्ड'' के प्रकाशन का उद्देश्य था।

i) अधिक धन कमाना

ii) जनता की भाषा में जनता से संवाद बनाना

iii) अंग्रेजी का विरोध करना

iv) हिंदी साहित्य का प्रचार करना ( )

7. निम्नलिखित लेखकों में से किसकी भाषा को आधुनिक हिंदी गद्य के सर्वाधिक नजदीक बताया गया है।

i) इंशाअल्ला खाँ

ii) मुंशी सदासुखलाल

iii) लल्लूलाल

iv) जान गिलक्राइस्ट ( )

8. नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर ''हाँ'' या ''नहीं'' में दीजिए।

i) मुंशी सदासुखलाल फोर्ट विलियम कालेज से संबद्ध रहे। (हाँ/नहीं)

ii) राजा लक्ष्मणसिंह संस्कृतनिष्ठ हिंदी के समर्थक थे। (हाँ/नहीं)

iii) राजा शिवप्रसाद ने 'रघुवंश' का अनुवाद किया। (हाँ/नहीं)

iv) श्रद्धाराम फुल्लौरी ने 'भाग्यवती' उपन्यास की रचना की। (हाँ/नहीं)

अभ्यास

1. राजा शिवप्रसाद और राजा लक्ष्मणसिंह के भाषा संबंधी दृष्टिकोण की तुलना कीजिए। (केवल चार पंक्तियों में)

.....

.....

.....

.....

.....

2. हिंदी गद्य के विकास में मुद्रण के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए। (केवल तीन पंक्तियों में)

.....

.....

.....

.....

.....

1.5 भारतेंदु युग (1875–1900)

भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म बनारस के एक धनी परिवार में 2 सितंबर सन् 1850 ई. को हुआ था। इनके पिता गोपाल चन्द्र साहित्य प्रेमी थे। उन्होंने 'नहुष वध' शीर्षक नाटक तथा कुछ कविताएँ भी लिखी हैं। विभिन्न विषयों पर अपनी रचनाओं के द्वारा इन्होंने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। नाटक और काव्य के अतिरिक्त इन्होंने 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' तथा 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' नामक पत्रिकाओं का संपादन भी किया। पत्रिकाओं के प्रकाशन का महत्त्व तत्कालीन लेखकों ने भली-भाँति समझ लिया था। इनके माध्यम से गद्य के विकास में बहुत सहायता मिली। भारतेंदु ने अपने समय तक प्रयुक्त खड़ी बोली के गद्य को परिमार्जित रूप में प्रस्तुत किया है। गद्य के विभिन्न क्षेत्रों-निबंध, नाटक, समालोचना आदि में उन्होंने एक नई परंपरा का सूत्रपात किया है। उनकी रचनाएँ जहाँ श्रृंगार, देशभक्ति और ईश्वर भक्ति से जुड़ी हैं वहीं तत्कालीन समाज की अवस्था को भी दर्शाती हैं। 35 वर्ष की अल्पायु में सन् 1885 ई. में उनका देहांत हो गया। हिंदी साहित्य के लिए किए गए उनके कार्यों के युगान्तकारी प्रभाव हुए। भाषा के मामले में उन्होंने अपनी अवधारणा स्पष्ट की। वे ''*निज भाषा*'' के विकास के पक्षधर थे। इसलिए उन्होंने लिखा है :

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल।

भारतेंदु अपने समय के लेखकों को प्रेरित किया करते थे। उनके प्रभाव और प्रयास से लेखकों की एक ऐसी मंडली तैयार हुई जिसने भारतेंदु की परंपरा को आगे बढ़ाया। भारतेंदु मंडल के लेखक थे-प्रताप नारायण मिश्र, पं. बालकृष्ण भट्ट, पं. बद्री नारायण चौधरी 'प्रेमघन,' जगन्नाथ दास रत्नाकर, बालमुकुंद गुप्त, श्री निवास दास, राधा कृष्ण दास, राधाचरण गोस्वामी आदि। गद्य की विविध विधाओं पर इन लेखकों ने कलम चलाई है। निबंध, नाटक, उपन्यास आदि विधाओं में इन लेखकों की रचनाएँ आज भी श्रेष्ठता का प्रतीक बनी हुई हैं।

पं. बालकृष्ण भट्ट ने सन् 1877 में प्रयाग से 'हिंदी प्रदीप' नामक मासिक पत्रिका निकाली। इस पत्रिका में विभिन्न विषयों पर लेख, नाटक, निबंध आदि प्रकाशित होते थे, भट्ट जी ने 'पद्मावती', 'शिशुपालवध' और 'चन्द्रसेन' नामक नाटक लिखे। 'सौ अजान एक सुजान' और 'नूतन ब्रह्मचारी' नामक उपन्यासों की रचना की। इसके अलावा उन्होंने आँख, कान, नाक आदि विषयों पर ललित निबंध भी लिखे। पं. बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने 'आनंद कादम्बिनी' मासिक पत्र और एक साप्ताहिक पत्र 'नीरद' भी निकाला। बालमुकुन्द गुप्त ने हिंदी निबंध के विकास में योगदान दिया। 'शिवशम्भु के चिट्ठ' इनकी प्रसिद्ध रचना है।

लाला श्रीनिवास दास ने 'प्रह्लाद चरित्र', 'तप्ता संवरण', 'रणधीर प्रेममोहिनी' तथा 'संयोगिता स्वयंवर' नामक नाटकों की रचना की। 'परीक्षा गुरु' नामक इनके उपन्यास की गणना हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों में की जाती है। राधाकृष्ण दास ने 'दुखिनी बाला', 'महारानी पद्मावती', 'महाराणा प्रताप' तथा 'सती प्रताप' शीर्षक नाटकों की रचना की। इन्होंने 'निस्सहाय हिंदू' नामक उपन्यास भी लिखा। भारतेंदु मंडल के लेखकों का हिंदी गद्य के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। नाटक, निबंध, उपन्यास आदि विधाओं का प्रारंभ इस युग में हुआ जिससे हिंदी गद्य के विकास को बल मिला।

भारतेंदु ने स्वयं बंगला आदि से अनुवाद के कार्य किये तथा अन्य लेखकों को भी इसकी प्रेरणा दी। अनुवाद कार्य के द्वारा भी हिंदी गद्य का विस्तार संभव हो सका।

बोध प्रश्न

9 भारतेंदु हरिश्चन्द्र के योगदान को व्यक्त करने वाली बातें नीचे के वाक्यों में कही गई है। उनमें से एक बात सही नहीं है, बताइए।

i) भारतेंदु ने हिंदी गद्य को साहित्यिक संस्कार दिया।

ii) भारतेंदु ने गद्य की नयी विधाओं में लेखन को प्रोत्साहित किया।

iii) भारतेंदु ने लेखन को आधुनिक चेतना से जोड़ा।

iv) भारतेंदु ने कई कहानियों की रचना की। ( )

10 भारतेंदु युग के साहित्य की कुछ प्रमुख विशेषताएँ नीचे बताई गई हैं उनमें से एक सही नहीं है, बताइए।

i) इनमें समाज सुधार को प्रोत्साहित किया गया।

ii) इनमें धार्मिकता का विरोध किया गया।

iii) इनमें राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति हुई।

iv) इनमें विनोदप्रियता और व्यंग्य मिलता है। ( )

11 नीचे भारतेंदु युग के कुछ रचनाकारों के नाम दिए गए हैं तथा कुछ पत्रिकाओं के नाम भी उनके सामने लिखे हैं। किस लेखक का किस पत्रिका से संबंध था, बताइए।

i)	भारतेंदु हरिश्चंद्र	क)	आनंद कादंबिनी	
ii)	बालकृष्ण भट्ट	ख)	कविवचन सुधा	
iii)	बदरीनारायण चौधरी	ग)	हिंदी प्रदीप	( )

1.6 द्विवेदी युग (1900-1920)

हम देख चुके हैं कि भारतेंदु जैसे प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति के कारण हिंदी गद्य के विकास में किस प्रकार गति आई। उनकी प्रेरणा से लेखकों की एक मंडली ही तैयार हो गई थी। इस मंडली ने अपने लेखों से हिंदी गद्य को समृद्ध किया था। इस दौर में अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों ने भी हिंदी में लेखन का कार्य किया था। इस युग के लेखकों की दृष्टि हिंदी के प्रचार-प्रसार पर अधिक थी, अतः इनकी भाषा में त्रुटियाँ नजर आती हैं। स्वयं भारतेंदु मंडल के लेखकों में भाषागत दोष थे। वे ''*इच्छा किया*'', ''*आशा किया*'' आदि प्रयोग किया करते थे। भाषा बिगड़ने का एक और कारण यह था कि अब हिंदी के उन पाठकों की संख्या बढ़ गई थी जो अनूदित उपन्यास पढ़ने में रुचि रखते थे लेकिन अन्य भाषाओं से हिंदी में अनुवाद करने वालों ने इस भाषा की अच्छी जानकारी प्राप्त करना आवश्यक नहीं समझा। उन्होंने शब्दकोश से अर्थ लगाकर ही अनुवाद का कार्य शुरू कर दिया। इस प्रकार जहाँ एक ओर अंग्रेजी शब्दों के अर्थ के आधार पर ''*स्वार्थ लेना*'', ''*जीवन होड़*'' जैसे प्रयोग अनुवाद में होने लगे वहीं बांग्ला के शब्दों के अर्थ पर ''*सिहरना*'', ''*बसंत रोग*'' आदि शब्दों का हिंदी में प्रयोग होने

लगा। भाषा में व्याप्त इस अराजकता को अनुशासनबद्ध करने का जरूरी काम किया महावीर प्रसाद द्विवेदी ने।

1.6.1 'सरस्वती' पत्रिका का योगदान

पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से भाषा के परिमार्जन का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन इंडियन प्रेस, इलाहाबाद से सन् 1900 में शुरू हुआ। सन् 1903 से इसके संपादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी बनाए गए। द्विवेदी जी 'सरस्वती' पत्रिका के सन् 1920 तक संपादक रहे। हिंदी गद्य के विकास में ही नहीं आधुनिक हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में भी 'सरस्वती' का अप्रतिम योगदान है। 'सरस्वती' को द्विवेदी जी के संपादन में जितनी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई, उतनी किसी अन्य हिंदी पत्रिका को प्राप्त नहीं हुई। द्विवेदी जी के संपादकत्व में 'सरस्वती' ने बीसवीं शती के आरंभिक दो दशकों के प्रतिनिधि साहित्य को प्रस्तुत करने का मंच प्रदान किया। 'सरस्वती' ने उस समय की राष्ट्रीय आकांक्षा को वाणी दी। 'सरस्वती' ने ज्ञान-विज्ञान के नए-नए क्षेत्रों में प्रवेश किया और यह प्रमाणित किया कि हिंदी में भी जटिल-से-जटिल विषयों को प्रस्तुत करने की क्षमता निहित है। 'सरस्वती' ने हिंदी गद्य को गद्य की सभी विधाओं से संपन्न बनाने का महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किया। 'सरस्वती' ने हिंदी गद्य को परिनिष्ठित रूप दिया, उसमें व्याप्त अनगढ़पन और अराजकता को समाप्त कर उसे एकरूपता प्रदान की। 'सरस्वती' ने हिंदी गद्य ओर पद्य की भाषा के द्वंद्व को समाप्त किया और पद्य के लिए भी खड़ी बोली को सुनिश्चित किया। ऊपर गिनाए गए ये सभी कार्य ऐतिहासिक महत्त्व के हैं और 'सरस्वती' ने ये सभी कार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के संपादकत्व में किया था।

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी (1861-1938) स्वयं कवि थे, लेकिन उन्हें कवि के रूप में उतनी प्रतिष्ठा नहीं मिली, जितनी अपने निबंध और समालोचनाओं के कारण मिली थी। द्विवेदी जी ने सबसे बड़ा काम यह किया कि उन्होंने 'सरस्वती' में प्रकाशन के लिए आने वाली रचनाओं की भाषाओं को सुधारकर परिमार्जित और एकरूप किया। द्विवेदी जी भाषा के प्रति बहुत सजग रहते थे ओर उनकी कोशिश रहती थी कि खड़ी बोली हिंदी अपना मानक रूप ग्रहण करे क्योंकि इसके बिना हिंदी में किसी महान साहित्य की रचना संभव नहीं थी।

द्विवेदी जी ने उस युग की राष्ट्रीय चेतना और नवजागरण की भावना को पूरी तरह आत्मसात किया था और उसे ही हिंदी साहित्य के लिए आदर्श मानते थे। उन्होंने साहित्य के मध्ययुगीन आदर्शों का विरोध किया, रीतिकालीन भावबोध और कलारूपों को अस्वीकार किया और अपने युग और समाज की जरूरतों के अनुकूल साहित्य रचने की प्रेरणा लेखकों में जगायी। उन्होंने साहित्य को समाज से जोड़ा। उन्होंने साहित्य को ज्ञान से जोड़ते हुए कहा कि ज्ञानराशि का संचित कोश ही साहित्य है। उन्होंने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि किसी देश की उन्नति अगर देखनी हो तो उस देश के साहित्य को देखना चाहिए। उन्होंने बुद्विजीवियों का आह्वान किया कि वे अपनी भाषा में उत्कृष्ट साहित्य की रचना कर अपने देश और समाज को नयी दिशा दें।

महावीरप्रसाद द्विवेदी की 'सरस्वती' के माध्यम से प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, माधवप्रसाद मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, नाथूराम शर्मा 'शंकर', अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', रामचंद्र शुक्ल, पद्मसिंह शर्मा आदि लेखकों को ख्याति मिली और उनका महत्त्वपूर्ण साहित्य जनता तक पहुँचा।

द्विवेदी युग में गद्य की विभिन्न विधाओं का उत्कृष्ट साहित्य लिखा गया। विशेष रूप से उपन्यास, कहानी, निबंध और आलोचना के क्षेत्र में इस युग में महत्त्वपूर्ण काम हुआ। इसी युग में इन विधाओं का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व बना और इसी स्वतंत्र व्यक्तित्व की नींव पर बाद में इन गद्य विधाओं ने महान् साहित्यकार और महान् रचनाएँ दीं। कहानी-उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद, नाटक के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद, निबंध के क्षेत्र में बालमुकुंद गुप्त, पूर्णसिंह, रामचंद्र शुक्ल तथा आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल इसी युग की देन थे। इसके अतिरिक्त जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत जैसी कई नई विधाओं में भी महत्त्वपूर्ण लेखन हुआ।

बोध प्रश्न

12. हिंदी भाषा और साहित्य के संवर्द्धन में 'सरस्वती' ने निम्नलिखित योगदान दिए। इनमें से एक सही नहीं है, उसे बताइए।
    i) राष्ट्रीय आकांक्षा को वाणी दी।
    ii) भारतेंदु युग के लेखकों को मंच प्रदान किया।
    iii) हिंदी भाषा को एकरूपता प्रदान की।
    iv) गद्य की सभी विधाओं में लेखन को प्रोत्साहित किया।
13. निम्नलिखित में से कौन-सी एक बात महावीर प्रसाद द्विवेदी के दृष्टिकोण में शामिल नहीं थी, बताइएः
    i) गद्य और पद्य की भाषागत एकता पर बल दिया।
    ii) रीतिकालीन भावबोध का समर्थन किया।
    iii) राष्ट्रीय भावना और नवजागरण को प्रोत्साहित किया।
    iv) समाज की जरूरतों के अनुकूल साहित्य रचने की प्रेरणा दी।

अभ्यास

3 भारतेंदु युग और द्विवेदी युग के निबंधों में कोई दो अंतर बताइए।

.....

.....

.....

4 'द्विवेदीयुग' के संदर्भ में 'सरस्वती' की भूमिका का विवेचन सिर्फ पाँच पंक्तियों में कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

1.7 प्रेमचंद और उनके बाद

हम देख चुके हैं कि द्विवेदी युग में भाषा के परिमार्जन का महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ था। द्विवेदी युग के बाद कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध आदि के क्षेत्र में जो उल्लेखनीय लेखन हुआ है, उसका संक्षिप्त लेखा-जोखा यहाँ दिया जा रहा है।

द्विवेदी युग के बाद गद्य साहित्य को जिन कुछ साहित्यकारों ने एक नई दिशा दी उनमें प्रेमचंद का नाम प्रमुख है। यद्यपि प्रेमचंद ने द्विवेदी युग से ही लेखन आरंभ कर दिया था, तथापि उनके उपन्यासों और कहानियों में नवीनता दिखाई देती है। अतः इन विधाओं में उनसे एक नए युग का प्रारंभ माना जाता हैं। समाज और देश की यथार्थ स्थिति का चित्रण उनकी रचनाओं में मिलता है। उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं में रचनाएँ की हैं। प्रेमचंद ने उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, जीवनियाँ आदि तो लिखी हीं, अनुवाद का कार्य भी किया। अपनी उत्कृष्ट रचनाओं के द्वारा उन्होंने हिंदी-कहानी को काफी ऊँचा उठाया। उन्होंने लगभग 300 कहानियों की रचना की है। इनकी कहानियों में विषय की विविधता है। समाज और परिवार की किसी-न-किसी समस्या को उन्होंने अपनी कहानियों का आधार बनाया है। उनकी अधिकतर कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में संकलित हैं।

प्रेमचंद युग में तथा उनके बाद उपन्यास-साहित्य को समृद्धि प्रदान करने वाले अन्य उपन्यासकारों में जयशंकर प्रसाद, चतुरसेन शास्त्री, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', इलाचंद्र जोशी, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, हजारीप्रसाद द्विवेदी, अमृतलाल नागर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

प्रेमचंद के समकालीन और परवर्ती जिन कहानीकारों ने इस विधा के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है उनमें जयशंकर प्रसाद, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, सुदर्शन, यशपाल, अमृत राय, मन्मथनाथ गुप्त, रांगेय राघव, जैनेन्द्र, भगवतीचरण वर्मा, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, रेणु, मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, मार्कण्डेय, उषा प्रियवंदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती आदि के नाम लिये जा सकते हैं। जैनेन्द्र के उपन्यास 'त्यागपत्र' का अध्ययन अप इस पाठ्यक्रम में करेंगे।

प्रेमचन्द के बाद साहित्य की प्रत्येक विधा में बहुत-कुछ लिखा गया है। नाटक, एकांकी, उपन्यास और कहानी के समान निबंध, आलोचना तथा गद्य की अन्य विधाओं में भी पर्याप्त प्रगति हुई है। निबंध के क्षेत्र में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। हिंदी निबंध के विकास में योग देने वाले अन्य लेखकों में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, बाबू गुलाब राय, वासुदेवशरण अग्रवाल, शांतिप्रिय द्विवेदी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी, डॉ. नगेंद्र, विद्यानिवास मिश्र, कुबेर नाथ राय आदि प्रमुख हैं। व्यंग्य निबंध परंपरा को आगे बढ़ाने में हरिशंकर परसाईं, शरद जोशी, रवीन्द्रनाथ त्यागी का नाम लिया जा सकता है। इस पाठ्यक्रम में आप आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और कुबेरनाथ राय के निबंधों का अध्ययन करेंगे।

निबंध के समान हिंदी आलोचना के क्षेत्र में भी आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। शुक्ल जी के बाद हिंदी आलोचना को विकसित करने वालों में आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेंद्र, डॉ. देवराज, डॉ. रामविलास शर्मा, शिवदान सिंह चौहान, गजानन माधव मुक्तिबोध, प्रकाशचंद्र गुप्त, नामवर सिंह, रामस्वरूप चतुर्वेदी, रघुवंश आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

प्रेमचंद और उनके बाद के साहित्य पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि युगीन परिस्थितियों का प्रभाव इस अवधि के साहित्य पर पड़ा है। इस काल की गद्यात्मक रचनाओं में जहाँ लेखकों ने सामाजिक समस्याओं के यथार्थ चित्रण पर अपनी दृष्टि केन्द्रित की, वहीं मनोवैज्ञानिक समस्याओं को भी साहित्य में स्थान दिया।

देश की राजनीतिक चेतना का प्रभाव भी साहित्यकारों पर पड़ा। इसी कारण भारत के स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में राष्ट्रीय चेतना साहित्य का वर्ण्य विषय बन गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय जगत में जो परिवर्तन हो रहा था उसका प्रभाव भी यहाँ के साहित्य पर पड़ने लगा था। रूस में समाजवाद का उदय विश्व की महत्त्वपूर्ण घटना थी। इसके फलस्वरूप हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद का आगमन हुआ। वर्षों के संघर्ष के बाद सन् 1947 में भारत को स्वतंत्रता मिली। देश की राजनीति में यह महान् परिवर्तन था। राष्ट्र स्वतंत्र था, देश की जनता विदेशी-शासन के अत्याचार से मुक्त थी। इस राजनीतिक परिवर्तन ने साहित्य पर काफी प्रभाव डाला। दूसरी ओर पश्चिम में जो वैज्ञानिक प्रगति हो चुकी थी उसका आगमन भी भारत में हो रहा था। नयी तकनीक की उन्नति से साहित्य में नयी विधाओं का जन्म होने लगा। रेल, प्रेस, बिजली, तार रेडियो आदि वैज्ञानिक साधनों ने जहाँ लोगों के जीवन में परिवर्तन उपस्थित किया, वहाँ साहित्य के क्षेत्र में नयी विधाओं के विस्तार में भी सहायता पहुँचाई। यात्रावृत्त, डायरी, जीवनी, आत्मकथा, रिपोर्ताज आदि नवीन विधाओं में लेखन का कार्य शुरू हुआ। गद्य की प्रमुख विधाओं के विषय में हम अगली इकाई में जानकारी प्राप्त करेंगे। इस संदर्भ में हमारा प्रयत्न है कि जिन विशिष्ट गद्य विधाओं का अध्ययन आप इस पाठ्यक्रम में करेंगे, उन्हीं पर विस्तार से चर्चा हो।

बोध प्रश्न

14. उपयुक्त शब्दों के प्रयोग से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

    i) प्रेमचंद की अधिकतर कहानियाँ ..... के आठ भागों में संकलित है।

    ii) 'त्यागपत्र' .....का प्रसिद्ध उपन्यास है।

    iii) व्यंग्य निबंध की परंपरा को आगे बढ़ाने में .... का नाम महत्वपूर्ण है ।

15. हिंदी निबंध के विकास में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, वासुदेवशरण अग्रवाल, शांतिप्रिय द्विवेदी तथा हजारी प्रसाद द्विवेदी का योगदान है। इसी क्रम में हिंदी निबंध को गति देने वाले किन्हीं तीन सुप्रसिद्ध निबंध-लेखकों के नाम लिखिए।

    .....

    .....

    .....

1.8 सारांश

आपने हिंदी गद्य के विकास का परिचय देने वाली इस इकाई का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है। आपने इकाई में गद्य और पद्य के अंतर को समझा है। आपने यह भी जाना कि किन कारणो से हिंदी में गद्य का आरंभ और विकास हुआ। हिंदी गद्य की परंपरा

को आधुनिक युग से जोड़कर देखा जाता है। हिंदी गद्य के विकास में भारतेंदु हरिश्चंद्र का विशेष योगदान है। लेकिन इकाई में यह भी बताया गया है कि भारतेंदु युग से पूर्व हिंदी गद्य का आरंभ किन परिस्थितियों में हुआ और किन विद्वानों ने इस में योगदान किया। भारतेंदु को क्यों युग प्रवर्त्तक समझा जाता है। इनके संबंध में इकाई में विस्तार से चर्चा की गई है। भारतेंदु युग के बाद के काल को द्विवेदी युग के नाम से जाना जाता है। 'सरस्वती' के संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम से इस युग का नामकरण हुआ है। बीसवीं सदी के आरंभिक दो दशकों में हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं के विकास में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। द्विवेदी युग में गद्य की किन विधाओं में किन-किन लेखकों ने योगदान किया है, इसका अध्ययन आप इकाई में पढ़ चुके हैं। द्विवेदी युग के बाद प्रेमचंद के कथा साहित्य और उसके बाद के विकास का भी संक्षिप्त परिचय इकाई में दिया गया है। हिंदी गद्य की विभिन्न विधाओं के संबंध में विस्तृत अध्ययन आप आगे करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- गद्य और पद्य में अंतर बता सकते हैं;
- हिंदी भाषा संबंधी विभिन्न दृष्टिकोणों को समझ सकते हैं;
- खड़ी बोली गद्य की आरंभिक स्थितियों का उल्लेख कर सकते हैं;
- खड़ी बोली गद्य के विकास के कारणों को समझ सकते हैं;
- भारतेंदु और द्विवेदी युग के गद्य-साहित्य के विकास का उल्लेख कर सकते हैं; और
- प्रेमचंद एवं उनके बाद के गद्य साहित्य के विकास को संक्षेप में समझ सकते हैं।

1.9 उपयोगी पुस्तकें

रामचंद्र शुक्ल : *हिंदी साहित्य का इतिहास,* नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

हजारीप्रसाद द्विवेदी : *हिंदी साहित्य उद्भव और विकास,* राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।

1.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न

1 i) ✓ ii) ✓ iii) x iv) ✓

2 i)

3 i) ब्रजभाषा ii) खड़ी बोली
iii) ब्रजभाषा iv) खड़ी बोली

4 iii)

5 i)

6 ii)

7 ii)

8 i) नहीं ii) हाँ

iii) नहीं iv) हाँ

9 iv)

10 ii)

11 i) ख ii) ग

iii) क

12 ii)

13 ii)

14 i) मानसरोवर ii) जैनेन्द्र iii) शरद जोशी

15 हरिशंकर परसाईं, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय

अभ्यास

1 राजा शिवप्रसाद उर्दूनिष्ठ हिंदी के पक्षधर थे, जिसमें अरबी, फ़ारसी के शब्द अधिक होते हैं, जबकि राजा लक्ष्मणसिंह हिंदी-उर्दू को अलग-अलग भाषा मानते थे और संस्कृतनिष्ठ हिंदी के पक्षधर थे।

2 मुद्रण की आधुनिक प्रणाली से किसी पुस्तक की सैकड़ों/हजारों प्रतियाँ बहुत कम समय में छापी जा सकती हैं और इन्हें लोगों तक पहुँचाया जा सकता हैं। इस सुविधा के कारण सामग्री को कंठस्थ करने की आवश्यकता नहीं रही। इससे गद्य के विकास में सहायता मिली।

3 i) भारतेंदु युग के निबंधों में व्यंग्य और विनोद की प्रवृत्ति अधिक है, जबकि द्विवेदी युग के निबंधों में वैचारिकता और विश्लेषण की प्रधानता हैं

ii) भारतेंदु युग के निबंधों की भाषा अनगढ़ है, जबकि द्विवेदी युग के निबंधों की भाषा परिमार्जित है।

4. ''सरस्वती'' ने राष्ट्रीय आकांक्षा को वाणी दी। ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में लेखन को प्रोत्साहित किया। सामाजिक नवजागरण की भावनाओं की अभिव्यक्ति पर बल मिला। हिंदी भाषा का संस्कार किया ओर गद्य की विभिन्न विधाओं के लेखन को प्रोत्साहित किया। उस युग का बड़े से बड़ा लेखक ''सरस्वती'' में छपकर गौरव अनुभव करता था।

इकाई 2 हिंदी गद्य की विविध विधाएँ

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 साहित्य का अर्थ

2.3 नाटक

2.4 उपन्यास

2.5 कहानी

2.6 लघुकथा

2.7 निबंध

2.8 आलोचना

2.9 रेखाचित्र और संस्मरण

2.10 आत्मकथा और जीवनी

2.11 यात्रावृत्त

2.12 रिपोर्ताज

2.13 सारांश

2.14 शब्दावली

2.15 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

यह पाठ्यक्रम गद्य की तीन विशिष्ट विधाओं उपन्यास, कहानी और निबंध के अध्ययन से संबद्ध है। गद्य की विधाओं के साहित्य का अध्ययन करने से पूर्व आपको हिंदी गद्य की विशिष्ट विधाओं से परिचित होना अपेक्षित है। इसी बिंदु को ध्यान में रखते हुए इस इकाई में हम आपको गद्य की विविध विधाओं का परिचय देंगे। इसे पढ़ने के बाद आप :

- वाङ्मय और साहित्य में अंतर बता सकेंगे;
- साहित्यिक रचनाओं का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- गद्य साहित्य में विकसित नवीन विधाओं का परिचय दे सकेंगे;
- गद्य की विविध विधाओं का स्वरूप स्पष्ट कर सकेंगे;
- गद्य की विविध विधाओं में अंतर कर सकेंगे; और
- एक-दूसरे से मिलती-जुलती गद्य विधाओं में मिलने वाली समानता और विषमता को समझ सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

हिंदी के ऐच्छिक पाठ्यक्रम की पहली इकाई में आपने हिंदी गद्य के विकास की जानकारी प्राप्त की है। उसी इकाई में आपने गद्य और पद्य के अंतर को जाना है। साथ ही, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि के विकास का भी परिचय प्राप्त किया है। नाटक, उपन्यास, कहानी आदि साहित्य की विधाएँ कहलाती हैं। इन विधाओं की रचना में कुछ-न-कुछ अंतर अवश्य रहता है। प्रत्येक विधा अलग प्रकार के लेखन की माँग करती है। दूसरे शब्दों में किसी एक विधा की लेखन-शैली दूसरी विधा की लेखन-शैली से भिन्न होती है। चूँकि नाटक, उपन्यास, कहानी आदि गद्य-साहित्य की विधाएँ हैं, अतः इस इकाई में हम साहित्य की चर्चा करते हुए साहित्य शब्द का विशिष्ट अर्थ जानेंगे तथा गद्य की विभिन्न विधाओं के संबंध में जानकारी प्राप्त करेंगे। इनमें अंतर करते हुए हम यह भी जानेंगे कि ज्ञान-विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप इन विधाओं में किन नई बातों का समावेश हुआ है और कौन-सी नयी विधाएँ अस्तित्व में आई हैं।

2.2 साहित्य का अर्थ

साहित्य शब्द का प्रयोग आज बहुत व्यापक अर्थों में होता हैं। जब हम किसी विषय के ग्रंथ या अन्य पाठ्यसामग्री की बात करते हैं तो वह ग्रंथ और पाठ्यसामग्री उस विषय का साहित्य कहलाता है। जैसे हम 'इतिहास-साहित्य' कहें तो इसका अर्थ हुआ इतिहास-विषय से संबंधित पुस्तकें या अन्य पाठ्यसामग्री। इसी प्रकार जब हम 'राजनीति-साहित्य' 'दर्शन-साहित्य' या 'विज्ञान-साहित्य' कहते हैं तो इसका अर्थ होता है राजनीति, दर्शन, विज्ञान विषयों से संबंधित पुस्तकें और अन्य पाठ्यसामग्री। दरअसल इस प्रकार के साहित्य के लिए ''वाङ्मय'' शब्द का प्रयोग अधिक उपयुक्त है। यहाँ वाङ्मय और साहित्य के अंतर को जान लेना चाहिए।

'वाङ्मय' के अंतर्गत सभी प्रकार की रचनाएँ आ जाती हैं, पर 'साहित्य' में कुछ विशिष्ट रचनाएँ आती हैं। साहित्य में केवल उन्हीं रचनाओं की गणना की जाती है जिनसे पाठक को आनंद की प्राप्ति होती है। यहाँ आनंद का अर्थ खुशी या प्रसन्नता से नहीं है बल्कि एक ऐसे अनुभव से है जो निजबद्धता से मुक्त होता है। व्यक्ति अपने स्व से परे होकर साहित्य का आस्वादन करता है। 'वाङ्मय' और 'साहित्य' के अंतर को आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी की पुस्तक 'साहित्य सहचर' की सहायता से और सरलता से समझा जा सकता है। उन्होंने अपने इस ग्रंथ में समस्त प्रकार की रचनाओं को तीन वर्गों में बाँटा है।

सूचनात्मक साहित्य, विवेचनात्मक साहित्य तथा सृजनात्मक या रचनात्मक साहित्य। आइए, इन तीनों का अंतर जानें–

i) **सूचनात्मक साहित्य** : इसके अंतर्गत ऐसी रचनाएँ आती हैं जिनके द्वारा हमें अनेक नयी बातों की जानकारी प्राप्त होती है। ऐसी रचनाओं को पढ़कर हम उनसे प्राप्त जानकारी से ही संतुष्ट हो जाते हैं। उदाहरण के लिए विश्वकोश, संदर्भ ग्रंथ आदि।

ii) **विवेचनात्मक साहित्य** : इसके अंतर्गत ऐसी रचनाएँ आती हैं जिनके द्वारा हमारा ज्ञान तो बढ़ता ही है, हमारी बोधन-शक्ति भी जागरूक बनी रहती है अर्थात् हमारे

अंदर और अधिक जानने की इच्छा पैदा होती है। विभिन्न ज्ञानानुशासनों जैसे दर्शन, विज्ञान और गणित की पुस्तकें इस प्रकार के साहित्य के अंतर्गत आती है।

iii) **रचनात्मक या सृजनात्मक साहित्य** : इस प्रकार की रचनाओं में ऐसी पुस्तकें शामिल हैं जिनमें लेखक हमारी जानी हुई बात को कुछ इस ढंग से कहता है कि हमारे अंदर उसे पढ़ने की ललक बढ़ती है। इस प्रकार की रचनाओं को पढ़कर हमें ऐसा लगता है मानों उसमें कही गई बातें हमारी अपनी ही हों।

समस्त प्रकार की रचनाओं के जो तीन वर्ग बताए गये हैं, उनमें से पहले दो को हम 'वाङ्मय' के अंतर्गत रख सकते हैं पर उनमें से तीसरा 'सृजनात्मक साहित्य' ही साहित्य शब्द के विशिष्ट अर्थ का बोधक है।

इस पाठ में हम 'साहित्य' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में करेंगे।

इस इकाई में गद्य की विभिन्न विधाओं का परिचय प्राप्त करेंगे। गद्य की रचनाओं को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है : कथात्मक गद्य और कथेतर गद्य। कथात्मक गद्य में वे विधाएँ आती हैं जिनमें कोई कहानी गद्य में कही गई होती है। कहानी, उपन्यास और नाटक इसी दृष्टि से कथात्मक गद्य विधाओं के अंतर्गत आएँगे और वे विधाएँ जिनमें भाव और विचारों की अभिव्यक्ति हो या किसी मनुष्य के जीवन से संबंधित अनुभवों का चित्रण हो। जैसे निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा, यात्रा संस्मरण आदि, उन्हें कथेतर विधाएँ कहेंगे। इस पाठ्यक्रम में आप गद्य की तीन विधाओं की उपन्यास, कहानी और निबंध की कृतियों का अध्ययन करेंगे।

अब हम गद्य की कुछ प्रमुख विधाओं का परिचय प्राप्त करेंगे।

2.3 नाटक

नाटक अत्यंत प्राचीन विधा है, इसलिए हम सर्वप्रथम इस पर विचार करेंगे।

आपने बचपन में अपने मोहल्ले, गाँव या शहर में कुछ नाटक देखे होंगे। और नहीं तो त्यौहार के दिनों में रामलीला, रासलीला आदि को देखकर यह बात तो आपकी समझ में आई ही होगी कि इनमें किसी महापुरुष के जीवन की घटनाओं का अनुकरण किया जाता है। जो कलाकार इन घटनाओं का अनुकरण कर इन्हें हमारे सामने पेश करते हैं, उन्हें 'अभिनेता' कहते हैं। वास्तव में नाटक के मूल में अनुकरण या नकल का भाव है। यह शब्द 'नट्' धातु से बना है। 'नाटक' रूपक का एक भेद है। संस्कृत के आचार्यों ने 'रूपक' को भी 'काव्य' के अंतर्गत रखा है। पर उन्होंने 'काव्य' शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थों में किया है। आज जिस अर्थ में हम 'कविता' शब्द का प्रयोग करते हैं, 'काव्य' शब्द का प्रयोग प्राचीन आचार्यों ने ठीक उसी अर्थ में नहीं किया है। उनके अनुसार 'काव्य' में कविता ही नहीं, नाटक भी सम्मिलित है।

कान से सुनने (श्रवण) और आँख से देखने (दृष्टि) के आधार पर काव्य के दो भेद किए गए हैं– श्रव्य-काव्य और दृश्य-काव्य। जिन रचनाओं का आनंद मुख्य रूप से सुनकर लिया जाता है वे श्रव्य-काव्य के अंतर्गत आती हैं। इस दृष्टि से कविता, कहानी, उपन्यास आदि श्रव्य-काव्य हैं। जिन रचनाओं का आनंद देखकर लिया जाता है उन्हें दृश्य-काव्य कहते हैं। नाटक इसी वर्ग की रचना है, अतः यह दृश्य-काव्य है।

किसी भी नाटक में इन सात बातों का होना आवश्यक है। इन्हें हम नाटक के तत्व कहते हैं। ये निम्नलिखित हैं:

1) कथावस्तु
2) पात्र या चरित्र-चित्रण
3) देशकाल या परिवेश
4) संवाद और भाषा
5) शैली
6) उद्‌देश्य या प्रतिपाद्‌य
7) अभिनेयता

नाटक का वर्गीकरण

नाटक के भेद करते समय हमें एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि नाटक उस रूप में साहित्य का अंग नहीं है जिस रूप में कहानी, उपन्यास या कविता आदि हैं। नाटक की दृश्यवत्ता इसे साहित्य की अन्य विधाओं से भिन्न धरातल पर ला खड़ा करती है। नाटक का लिखित आलेख संपूर्ण नाट्य नहीं है। संपूर्ण नाट्य तो तब बनता है जब नाटककार द्वारा लिखित नाट्यालेख को निर्देशक अभिनेताओं के सहयोग से रंगमंच पर प्रेक्षक–समुदाय के सामने प्रस्तुत करता है।

रेडियो नाटक

नाटक को रंगमंच पर देखने के अलावा आप रेडियो पर भी अक्सर नाटक सुनते होंगे। रेडियो नाटक रंगमंचीय नाटक से अलग एक नयी विधा है। मूलतः नाटक दृश्य विधा है, किंतु रेडियो नाटक में शब्द और ध्वनि का विशेष महत्त्व है। रेडियो नाटक मंचीय नाटक से इस अर्थ में भिन्न है कि जहाँ मंचीय नाटक में विभिन्न रंगमंचीय उपकरणों का प्रयोग होता है तथा अभिनेताओं के अभिनय, हाव-भाव, गति आदि के द्वारा दर्शकों तक बात पहुँचाई जाती है, वहाँ रेडियो नाटक में केवल ध्वनि के माध्यम से ही सब कुछ करना होता है। इसमें ध्वनि के द्वारा ही अभिनेताओं का चलना-फिरना, हँसना-रोना, आह-भरना आदि प्रस्तुत किया जाता है।

रेडियो नाटक बहुत हद तक संवादों पर भी निर्भर रहता है। रेडियो नाटक के संवाद लिखे ही इस प्रकार जाते हैं कि उनमें ऐसी बातें, ऐसे संकेत दे दिए जाएँ जिनकी कि मंचीय नाटक में आवश्यकता नहीं होती। रेडियो नाटक के बारे में एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसमें विभिन्न भावपूर्ण स्थितियों की अभिव्यक्ति के लिए पार्श्व संगीत का बहुत प्रयोग होता है। जैसे किसी की मृत्यु पर करुण संगीत का बजना, किसी आश्चर्यजनक घटना पर चौंकाने वाली धुन का बजना आदि।

टेलीविजन नाटक

आजकल तो आप लगभग हर रोज़ टेलीविजन पर नाटक देखते होंगे। टेलीविजन पर जो धारावाहिक नाटक दिखाए जाते हैं उन्हें 'सीरियल' कहा जाता है। टीवी नाटक भी नाटक की एक नई विधा है जो फिल्म के अधिक करीब है। टीवी नाटक और रंगमंचीय नाटक में बहुत अंतर है। सबसे बड़ा अंतर तो यह है कि टीवी नाटक में कैमरे का इस्तेमाल होता है। यहाँ हर चीज़ कैमरे की आँख से ही देखी जाती है। पूरे नाटक को पहले कैमरे में अंकित किया जाता है। कैमरा एक बार में जो दृश्य अंकित करता है, उसे शॉट कहते हैं। इसके बाद विभिन्न शॉट को मिलाकर दृश्यों (सीन) का निर्माण किया जाता है। और फिर दृश्यों को मिलाकर पूरा नाटक तैयार होता है।

दूसरा अंतर यह है कि रंगमंच पर सब कुछ नहीं दिखाया जा सकता, क्योंकि रंगमंच की अपनी सीमाएँ हैं, किंतु टीवी पर लगभग सभी कुछ दिखाया जा सकता है।

तीसरा अंतर यह है कि रंगमंच पर अभिनेताओं और दर्शकों का प्रत्यक्ष संबंध होता है। यदि कोई अभिनेता मंच पर कोई भूल कर बैठे तो वह साफ दिखाई देगी और उससे नाट्य–प्रस्तुति में भी अंतर आ जाएगा, लेकिन टेलीविज़न नाटक में ऐसी भूलों की गुंजाइश प्रायः नहीं रहती, क्योंकि भूल हो जाने की स्थिति में यहाँ दृश्य को दुबारा शूट किया जा सकता है।

नुक्कड़ नाटक

यह नाटक की नई विधा है। नाटकों को रंगमंच पर प्रस्तुत किया जाता है। लेकिन रेडियो और टेलीविजन के लिए लिखे जाने वाले नाटक रंगमंच पर प्रस्तुत नहीं किए जाते। इसी प्रकार नुक्कड़ नाटक भी रंगमंच पर प्रस्तुत नहीं किया जाता। जैसाकि इसके नाम से स्पष्ट है, यह रंगमंच पर नहीं बल्कि गलियों, सड़कों, चौराहों, चौपालों, नुक्कड़ों आदि कहीं भी खेला जा सकता है। नाटक तो ठीक उसी रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जैसे रंगमंच पर किया जाता है। लेकिन यहाँ न तो मंच बनाया जाता है, न पर्दा गिराया-उठाया जाता है। अभिनेता नाटक की कथावस्तु के अनुसार अपने पात्र के अनुरूप प्रतीकात्मक परिवर्तन कर लेता है।

नुक्कड़ नाटक को मजमे की तरह प्रस्तुत किया जाता है। उसकी कथावस्तु प्रासंगिक और सामान्यजन की अभिरुचियों के अनुरूप होना जरूरी है। कथा प्रायः प्रचारात्मक और जन-जागृति फैलाने वाली होती है। कथानक में नाटकीयता पर बल होता है। तथ्यात्मकता की बजाय संकेतात्मकता पर बल दिया जाता हैं। पात्रों की संख्या सीमित रखी जाती है। कई बार एक ही नाटक में एक अभिनेता को एक-से-अधिक पात्रों का अभिनय करना होता है। नाटक के संवाद सरल, संप्रेषणीय, चुटीले और तत्काल प्रभाव पैदा करने वाले होते हैं। प्रभाव को बढ़ाने के लिए गीत-संगीत आदि का प्रयोग भी किया जाता है।

एकांकी नाटक

हिंदी एकांकी नाटक पूर्ण रूप से एक नयी विधा है। आधुनिक कहानी की भाँति हिंदी एकांकी नाटक भी पश्चिम से प्रेरित है। कुछ आलोचकों के मत में एकांकी को पश्चिम से जोड़ना बहुत ठीक नहीं है, क्योंकि रूपक और उपरूपक के कुछ भेद यथा-व्यायोग, भाण, प्रहसन, वीथी, सट्टक, विलासिका, प्रकारिणका आदि एक ही अंक के थे। अतः भारत में 'एकांकी' की परंपरा रही है। भास का 'उरुभंग' और 'मध्यम व्यायोग' एकांकी नाटक के निकट हैं। किन्तु तुलना करने पर आधुनिक एकांकी और संस्कृत के रूपक में स्पष्ट अंतर दिखता है। कथावस्तु और शिल्प-दोनों दृष्टियों से रूपक और एकांकी में अंतर है। आधुनिक एकांकी की मूल प्रेरणा जीवन का द्वन्द्व और संघर्ष है। मानसिक विश्लेषण को आधार बनाकर आधुनिक एकांकी नाटक जीवन की अभिव्यक्ति को अपना मुख्य उद्देश्य मानता है।

एकांकी नाटक का उद्भव और विकास पश्चिम में भी नया ही है। पश्चिम में प्राचीन काल में बड़े-बड़े नाटक ही खेले जाते थे। नाटक के बीच दृश्य-परिवर्तन के दौरान समय निकालने के लिए, छोटे-छोटे नाटक खेले जाते थे जिन्हें ''कर्टन रेजर्स'' कहते थे। ऐसे नाटकों का स्वतंत्र विकास वहाँ भी नहीं हो पाया। आप सोच रहे होंगे कि एकांकी का विकास क्यों हुआ? इसका उत्तर है–समय की कमी के कारण। दूसरे

विश्वयुद्ध के बाद और आधुनिक प्रगति की दौड़ में मनुष्य के पास समय की कमी हो गई। जीवन की भाग-दौड़ में वह कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक कार्य करना चाहता है, यहाँ तक कि मनोरंजन के लिए भी वह कम-से-कम समय देना चाहता है। वर्तमान युग में व्यक्ति की व्यस्तता और समय के अभाव के कारण अनेक ऐसी विधाओं का विकास हुआ है जो आकार में लघु है। एकांकी का विकास भी इसी कारण हुआ है।

नाटक के समान एकांकी में भी छह तत्व होते हैं : (1) कथावस्तु (2) चरित्र चित्रण (3) परिवेश (4) संरचना शिल्प (5) प्रतिपाद्य और (6) रंगमचीयता या अभिनेयता। लेकिन नाटक के समान एकांकी में न तो कथावस्तु के विस्तार का अवकाश रहता है और न ही पात्रों की बहुलता का। ऐसा भी नहीं कि नाटक को छोटा करके एकांकी बना लिया जाए। एकांकी सर्वथा स्वतंत्र विधा है। नाटक में घटनाओं की बहुलता रहती है, जबकि एकांकी पात्र, घटना, संवाद आदि की दृष्टियों से सीमित होता है। नाटक में अनेक अंक होते हैं, लेकिन एकांकी में एक ही अंक होता है।

बोध प्रश्न

1. वाङ्मय और साहित्य में मुख्य अंतर क्या है? तीन पंक्तियों में बताइए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. संचार माध्यमों के विकास के फलस्वरूप नाटक के क्षेत्र में कौन से नए रूप उभरे हैं? दो के नाम लिखिए।

   .....

   .....

3. उपयुक्त शब्दों के द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

   i) नाटक ..... काव्य है।

   ii) रेडियो नाटक में ..... का विशेष महत्त्व है।

   iii) एकांकी में ..... अंक होता है।

2.4 उपन्यास

उपन्यास साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा है। आपमें से कुछ लोगों ने अवश्य ही कोई-न-कोई उपन्यास पढ़ा होगा। उपन्यास पढ़ते समय ऐसा महसूस किया होगा कि जैसे आपकी अपनी ही बात कथा के माध्यम से कही जा रही हो। आपने यह भी अनुभव किया होगा कि उपन्यास की कथा और पात्र आपके परिवेश के ही हैं। यही नहीं, आप उपन्यास के पात्रों के सुख-दुख से प्रभावित भी होते हैं। ऐसा क्यों है? वास्तव में उपन्यास के माध्यम से लेखक मानव जीवन की तस्वीर को इस निपुणता से

प्रस्तुत करता है कि हम उसमें डूब जाते हैं और उसमें वर्णित कथा हमें अपनी-सी लगने लगती है। प्रेमचंद ने उपन्यास के बारे में अपना यह मत प्रकट किया है : ''मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र-मात्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्य को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है।'' उपन्यास में जीवन का व्यापक चित्रण किया जा सकता है, अतः उसका आकार प्रायः बड़ा होता है।

हिंदी में उपन्यास विधा का आरंभ भारतेंदु युग से पूर्व हो चुका था। आरंभ में हिंदी-उपन्यास की शुरूआत अनुवादों के द्वारा हुई। बंगला, मराठी, अंग्रेज़ी आदि से अनूदित उपन्यास हिंदी पाठकों के सामने आए फिर हिंदी में मौलिक उपन्यास लिखे जाने लगे। समय और परिस्थिति का प्रभाव लेखकों पर स्पष्ट रूप में देखा जा सकता है। काल-विशेष की परिस्थितियाँ लेखक को भी प्रभावित करती हैं। हिंदी उपन्यास भी समय और परिस्थिति से प्रभावित होता रहा है और उपन्यास का वर्तमान रूप भी काल और परिस्थिति से प्रभावित है।

हिंदी में आरंभ में तिलस्मी और ऐय्यारी के उपन्यास लिखे गए। तिलस्मी उपन्यासों में घटनाएँ तिलस्म से पूर्ण रहती थीं—अर्थात् ऐसे उपन्यासों में इन्द्रजाल, जादू, अद्‌भुत कारनामे; अलौकिक व्यापार और चमत्कार से पूर्ण घटनाएँ होती थीं। इस प्रकार के उपन्यासों में नायक वेश बदल कर विकट और विलक्षण कार्य करता था। जासूसी उपन्यास भी उसी प्रकार की घटनाओं से पूर्ण होते थे। जासूसी उपन्यास की खास बात यह होती है कि इसमें नायक जासूस होता है जिसका मुख्य कार्य किसी भेद का पता लगाना होता है। किसी हत्यारे का, किसी अपराधी का या किसी रहस्य का पता लगाता है। वह अद्‌भुत और साहसपूर्ण कारनामे करता है। बाद में हिंदी में ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक उपन्यास भी लिखे गये।

उपन्यास के तत्त्व

वह कसौटी जिसके आधार पर किसी उपन्यास के गुण-दोषों की परीक्षा की जाती है तत्त्व कहलाता है। इन तत्वों के आधार पर आप उपन्यासों का मूल्यांकन कर सकते हैं। उपन्यास के निम्नलिखित तत्त्व हैं :

1) कथावस्तु
2) चरित्र-चित्रण
3) परिवेश (देश-काल)
4) संरचना-शिल्प (भाषा-शैली)
5) प्रतिपाद्य

कथावस्तु : कथावस्तु उपन्यास का मेरुदण्ड है। विभिन्न महत्त्वपूर्ण घटनाओं का क्रमबद्ध कलात्मक व किसी निश्चित उद्‌देश्य की पूर्ति—हेतु किया गया 'संयोजन' कथानक कहलाता है।

प्रत्येक प्रकार के उपन्यास में कथावस्तु अनिवार्य रूप से होती है, इसके बिना रचना की कल्पना ही नहीं की जा सकती। प्रमुख कथावस्तु अकेले नहीं आती। इसके साथ कुछ सहयोगी कथाएँ भी चलती हैं—रचना की मुख्य कथावस्तु के साथ कुछ अन्य प्रासंगिक कथाओं का संयोजन भी रहता है। मुख्य कथा को 'अधिकारिक कथा' तथा सहायक कथाओं को ''प्रासंगिक कथा'' कहते हैं।

उपन्यास की कथा ठोस और शृंखलाबद्ध होनी चाहिए, अनावश्यक प्रसंगों से बचना चाहिए। उपन्यास के मूलभाव या चरित्र के विकास के लिए कथावस्तु का आयोजन जरूरी है। कथावस्तु जीवन की वास्तविकता से जुड़ी होनी चाहिए। पहले के उपन्यासों में कल्पना का अधिक स्थान होता था, लेकिन आज यथार्थ जीवन की घटनाओं को ही महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। उपन्यास की कथावस्तु का विकास पहले वर्णन द्वारा होता था किन्तु आज उपन्यास की कथा किसी भी रूप में आरंभ हो सकती है। आज के उपन्यासों में जीवन संदर्भों से कथावस्तु का आरंभ होता है और जीवन के विभिन्न पहलुओं के द्वारा कथा का विकास होता है।

चरित्र-चित्रण : जिन व्यक्तियों के जीवन की घटना को लेकर कथा का आयोजन किया जाता है, वे उपन्यास के पात्र कहलाते हैं। उदाहरण के लिए, जैनेन्द्र के उपन्यास 'त्यागपत्र' में बुआ (मृणाल) का चरित्र-चित्रण व्यापक धरातल पर हुआ है। उपन्यासकार पात्रों के कार्यों और वार्तालाप से तो उनके चरित्र को प्रकाशित करता ही है, कभी-कभी प्रत्यक्ष रूप से भी उनका चरित्र-चित्रण कर देता है। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में चरित्र-चित्रण की इस विधि को अपनाया है।

परिवेश : परिवेश के अंतर्गत देशकाल अर्थात् वह स्थान और समय आता है जहाँ कहानी की घटना घटित हुई। उपन्यासकार के लिए यह आवश्यक है कि वह देश और काल का यथार्थ रूप प्रस्तुत करे। यदि ग्राम की कथा है तो पूरा परिवेश ग्रामीण होना चाहिए। मिट्टी के घर, तालाब, खेत, पगडंडी, पशुधन, ग्रामीण वेशभूषा, रीति-रिवाज, ग्राम्य भाषा आदि ग्रामीण परिवेश की उपस्थिति में सहायक हो सकते हैं।

संरचना शिल्प

शैली : उपन्यासकार चाहे किसी भी विषय पर उपन्यास लिखे, उसके लिखने का ढंग अपना होता है। प्रत्येक उपन्यासकार अपने तरीके से कथा को प्रस्तुत करता है। इसी तरीके को शैली कहते हैं। आपने अनुभव किया होगा कि प्रत्येक उपन्यासकार की अपनी अलग शैली होती है। एक उपन्यासकार की कई रचनाओं में भी विषयवस्तु के अनुसार शैली बदल जाती है। उपन्यासकार प्रत्यक्ष, परोक्ष, पत्र, डायरी, पूर्वदीप्ति आदि शैलियों का प्रयोग कर सकता है।

संवाद : उपन्यास के पात्र आपस में जो वार्तालाप करते हैं उन्हें हम संवाद कहते हैं। संवादों से उपन्यास की कथा आगे बढ़ती है तथा पात्रों के चरित्र पर प्रकाश भी पड़ता है। वार्तालाप के द्वारा पात्रों के विचार जाने जा सकते हैं। उपन्यास में पात्रों के अनुकूल संवादों का होना आवश्यक है, अन्यथा कथा में अस्वाभाविकता आ जायेगी।

भाषा : उपन्यासकार भाषा के माध्यम से रचना में सजीवता लाता है। सही भाषा के प्रयोग से पात्र सजीव और स्वाभाविक लगते हैं। यदि उपन्यासकार अपना विचार रख रहा हो तो उसकी अपनी भाषा होनी चाहिए, लेकिन पात्रों के संवादों की भाषा पात्रों की मनःस्थिति के अनुरूप होनी चाहिए। सफल उपन्यासकार प्रायः सरल और बोलचाल की भाषा का प्रयोग करता है।

प्रतिपाद्य : किसी भी रचना के पीछे कोई-न-कोई उद्देश्य होता है। सफल उपन्यासकार वही है जो अपना उद्देश्य सहजता से पाठकों तक पहुँचा दे। 'गोदान' उपन्यास लिखने के पीछे प्रेमचंद का क्या उद्देश्य था? वे गाँव में पले थे। गाँव में किसानों की आर्थिक दुर्दशा उन्होंने देखी थी। किसानों का शोषण कैसे होता है, यह

उन्होंने देखा था। कृषक-जीवन के यथार्थ रूप को प्रस्तुत करना तथा उनके शोषण को दिखाना उनका उद्देश्य था, जिसमें उन्हें पूर्ण सफलता मिली है।

2.5 कहानी

उपन्यास के समान कहानी भी अत्यंत लोकप्रिय विधा है। हिंदी में कहानी का प्रारंभ अनूदित कहानियों से हुआ। मौलिक कहानी–रचना बाद में शुरू हुई। आधुनिक हिंदी कहानी पर पश्चिम का प्रभाव है। अमरीकी कहानीकार एडगर एलन पो ने कहा है, ''कहानी एक ऐसा आख्यान है जो एक ही बैठक में पढ़ा जा सके और पाठक पर किसी एक प्रभाव को उत्पन्न कर सके।'' उसमें उन सभी बातों को छोड़ दिया जाता है जो इस प्रभाव को अग्रसर करने में सहायक नहीं होती। वह अपने आप में पूर्ण होती है।

आइए, अब हम कहानी के तत्वों की चर्चा करें।

कहानी के तत्व

1) कथावस्तु
2) चरित्र-चित्रण
3) परिवेश
4) संरचना-शिल्प
5) प्रतिपाद्य

कथावस्तु : जैसा कि उपन्यास की चर्चा करते हुए बताया जा चुका है–कथावस्तु का अर्थ है कथा में वर्णित घटना। कहानी में कथावस्तु संक्षिप्त होती है। कथा के विस्तार के लिए इसमें अवसर नहीं रहता। कथावस्तु का आरंभ घटना से किया जा सकता है और साधारण बात से भी। कहानी में किसी ऐसी अनावश्यक बात का वर्णन नहीं होना चाहिए जो मूल कथा से जुड़ी न हो। घटनाओं, स्थितियों और भावों का सांकेतिक रूप में वर्णन करना चाहिए। कल्पना की जगह जीवन के यथार्थ से जुड़ी घटना आज की कहानी में आदर्श समझी जाती है।

चरित्र-चित्रण : कहानी में पात्रों की संख्या कम होती है। सामान्यतः कहानी में किसी एक प्रमुख पात्र के इर्द-गिर्द सारी घटना घूमती है। उपन्यास में जहाँ चरित्र के विकास के लिए पर्याप्त अवसर रहता है, वहाँ, कहानी में सांकेतिक रूप से चरित्र-चित्रण की आवश्यकता होती है। कहानी के मूल भाव को लेकर ही चरित्र-चित्रण किया जाता है। सफल कहानीकार अपने पात्रों का पूरा चरित्र संक्षेप में ही निर्मित करते हैं।

कहानीकार चरित्र-चित्रण के लिए अनेक विधियाँ अपनाता है। कभी वह पात्रों के कार्यों अथवा विचार से उनके चरित्र को उभारता है, तो कभी पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप अथवा एक-दूसरे के बारे में व्यक्त विचारों के द्वारा भी चरित्र-चित्रण करता है। कभी-कभी लेखक स्वयं भी पात्रों के गुण-दोषों को बताता है। इनके अलावा चरित्र-चित्रण की कुछ और विधियाँ भी हो सकती हैं।

परिवेश : कहानी किसी स्थान विशेष और समय विशेष से संबंधित होती है। इन्हीं से परिवेश का निर्माण होता हैं। कहानी में उचित स्थान तथा काल का वर्णन सजीवता लाता है। यदि कहानी की घटनाएं गाँव में घटित हुई हैं, तो परिवेश का चित्रण करते हुए इस बात को ध्यान में रखना होगा कि उसकी विशिष्टता उभर कर आ सके। कहानी में लंबे-चौड़े विवरण का स्थान नहीं रहता, इसलिए कहानीकार थोड़े में कहानी के अनुकूल परिवेश का चित्रण करता है। परिवेश के स्वाभाविक चित्रण के लिए यह जरूरी है कि कहानीकार जिस स्थान और काल की घटना को ले, उसके बारे में उसे सही जानकारी हो। इसके अभाव में कहानी में अस्वाभाविकता आ जाएगी।

संरचना शिल्प

शैली : कहानी लिखने का जो ढंग रचनाकार अपनाता है उसे शैली कहते हैं। प्रत्येक कहानीकार अपने ढंग से कहानी लिखता है, इसी कारण कहानी की शैली में विभिन्नता रहती है। विषयवस्तु और लेखक की अभिरुचि के अनुसार भी कहानी की शैली भिन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए व्यक्तिगत रुचि के अनुसार प्रेमचंद ने प्रायः बाह्य घटनाओं पर आधारित वर्णनात्मक कहानियों की रचना की है, जबकि जैनेन्द्र और अज्ञेय ने मनोविश्लेषण को कहानी का आधार बनाया है।

संवाद : कहानी के पात्र आपस में जो बातचीत करते हैं उन्हें संवाद कहते हैं। संवादों से कहानी आगे बढ़ती है। उदाहरण के लिए चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' की कहानी 'उसने कहा था' में कहीं-कहीं वार्तालाप ही कहानी को आगे बढ़ाते हैं। इसी प्रकार जयशंकर प्रसाद की कहानी 'आकाशदीप' की कथा संवादों और वार्तालाप के माध्यम से आगे बढ़ती है। सफल कहानीकार पात्रों के अनुकूल संवादों का आयोजन करता है। यदि एक अनपढ़ पात्र शिक्षित की तरह बोलने लगे तो इसमें अस्वाभाविकता आ जाएगी। काल और स्थान के अनुसार पात्रों के संवादों में भी परिवर्तन होता है। यदि कहानी ऐतिहासिक है और स्थान राजस्थान है तो कहानी के पात्र उसी स्थान के अनुकूल वार्तालाप करेंगे। यदि कहानी लखनऊ से संबंधित है तो पात्रों के वार्तालाप में वहाँ की भाषा की विशिष्टता का प्रयोग स्वभावतः होगा।

भाषा : भाषा के द्वारा कहानीकार कहानी में सजीवता, स्वाभाविकता और रोचकता ला सकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि कहानीकार का भाषा पर पूर्ण अधिकार हो। कहानी में जहाँ लेखक अपना विचार रखता है– वहाँ उसकी अपनी भाषा होगी। लेकिन जब कोई बात पात्रों के द्वारा कहलवाई जाए, तब पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग आवश्यक है। कहानी की भाषा सरल, सुबोध और बातचीत के रूप में होनी चाहिए। कठिन भाषा का प्रयोग कहानी समझने में बाधा उत्पन्न करता है।

प्रतिपाद्य : कहानी के द्वारा लेखक जो संदेश देना चाहता है, उसे प्रतिपाद्य कहते हैं। सफल कहानी कथावस्तु, पात्र, परिवेश, शिल्प आदि तत्वों से निर्धारित नहीं होती, बल्कि उसकी सफलता गंभीर उद्देश्य पर निर्भर होती है। किसी कहानी को समझने के लिए यह जरूरी है कि उसके प्रतिपाद्य को समझें। इसके लिए प्रथमतः कहानी को समझें, फिर उसमें निहित संदेश को पहचानें और अंत में कहानी की विशिष्टता को पहचानने का प्रयास करें। इस पाठ्यक्रम में आप जिन कहानियों का अध्ययन करेंगे उनके कथासार तथा विश्लेषण के अंतर्गत हमने कहानी के कथ्य और प्रतिपाद्य को बताने का प्रयत्न किया है। उपन्यास और कहानी के तत्वों के अध्ययन के आधार पर आप इन दो प्रमुख विधाओं के अंतर को आसानी से पहचान सकते हैं:

उपन्यास	कहानी
1) उपन्यास में जीवन का व्यापक चित्रण रहता है।	1) कहानी में जीवन के किसी एक अंश का चित्रण रहता है।
2) उपन्यास का आकार बड़ा होता है।	2) बड़ी से बड़ी कहानी भी छोटे से छोटे उपन्यास से छोटी होती है।
3) उपन्यास में पात्रों की संख्या अधिक होती है।	3) कहानी में पात्रों की संख्या कम होती है।
4) उपन्यास में घटनाओं का बाहुल्य होती है।	4) कहानी में घटनाओं की संख्या सीमित रहती है। सामान्यतः किसी एक घटना को लेकर कहानी लिखी जाती है।
5) उपन्यास में विचारों को विस्तार से रखे जाने की गुंजाइश होती है।	5) कहानी में विचार को सांकेतिक रूप में रखा जाता है।
6) उपन्यास में स्थान और काल की सीमा विस्तृत हो सकती है।	6) कहानी में प्रायः एक स्थान और एक काल का चित्रण रहता है।

विषय के अनुरूप कहानियों के निम्नलिखित भेद किए जा सकते हैं :

1) घटना प्रधान 2) वातावरण प्रधान 3) चरित्र प्रधान
4) ऐतिहासिक 5) सामाजिक 6) मनोवैज्ञानिक

1) **घटना प्रधान कहानियाँ** : वे कहानियाँ हैं जिनमें घटना मुख्य है – अर्थात् घटनाओं के माध्यम से कहानी आगे बढ़ती है। उदाहरण के लिए प्रेमचंद की 'नमक का दारोगा' घटना प्रधान कहानी है।

2) **वातावरण प्रधान** : जब किसी कहानी को पढ़ने के बाद हमें ऐसा लगे कि जैसे पूरी कहानी में वातावरण ही हावी है, तब उसे वातावरण प्रधान कहानी कहते हैं। उदाहरण के तौर पर आप 'शतरंज के खिलाड़ी' को देख सकते हैं। यह वातावरण प्रधान कहानी है।

3) **चरित्र प्रधान** : ऐसी कहानी जिसमें चरित्र का प्रभाव महत्त्वपूर्ण हो अर्थात् कहानी को पढ़ने के बाद आप महसूस करें कि लेखक ने पात्र के चरित्र को उभारने के लिए ही कहानी लिखी है, उसे चरित्र प्रधान कहानी कहते हैं। गुलेरी जी की 'उसने कहा था' में लहनासिंह के चरित्र को उभारा गया है। इसे चरित्र प्रधान कहानी कह सकते हैं।

4) **ऐतिहासिक कहानी** : ऐसी कहानी जो इतिहास की घटनाओं से संबंधित हो, ऐतिहासिक कहानी कही जाती है। जैसे प्रेमचंद की 'शतरंज के खिलाड़ी'।

5) **सामाजिक कहानी** : जिन कहानियों में परिवार और समाज की समस्याओं को प्रमुखता दी जाती है, उन्हें हम सामाजिक कहानियाँ कह सकते हैं। उदाहरण के तौर पर प्रेमचंद की 'अलग्योझा' तथा 'ठाकुर का कुआँ' कहानियों को देख सकते हैं। ये सामाजिक कहानियाँ हैं।

6) **मनोवैज्ञानिक कहानी** : जिन कहानियों में मानव मन को प्रमुखता दी गयी हो अर्थात् पात्रों के अंदर उठने वाले भावों–विचारों को व्यक्त किया गया हो, उन्हें मनोवैज्ञानिक कहानी के अंतर्गत रखा जा सकता है। उदाहरण के लिए यशपाल की 'ज्ञान दान', 'अभिशप्त' और जैनेंद्र की कहानी 'पाजेब' आदि।

2.6 लघुकथा

गल्प साहित्य के अनेक रूप हिंदी में प्रचलित हैं, जिनमें से एक है लघुकथा। ऊपर से देखने पर लघुकथा शार्ट स्टोरी का अनुवाद प्रतीत होता है, पर हिंदी लघुकथा से वही ध्वनि नहीं निकलती जो अंग्रेजी शार्ट स्टोरी से निकलती है। अंग्रेजी में कहानियों को उपन्यास की तुलना में आकार की दृष्टि से लघु होने के कारण शार्ट स्टोरी कहा गया पर हिंदी की लघुकथा कहानी से भी आकार में छोटी होती है।

बोध प्रश्न

4. तिलस्मी और जासूसी उपन्यासों में मुख्य अंतर बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

5. उपन्यास और कहानी में कोई दो अंतर बताइए।

.....

.....

.....

.....

6. चरित्र-चित्रण के लिए कहानीकार अनेक विधियाँ अपनाता है। आप किन्हीं दो विधियों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

7. लघुकथा की एक विशेषता है प्रतीकात्मकता। आप दो अन्य विशेषताएँ बताइए।

.....

.....

2.7 निबंध

'निबंध' संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'संवार कर सीना'। प्राचीन काल में हस्तलिखित ग्रंथों को संवार कर सिया जाता था और इस प्रक्रिया को निबंध कहते थे। धीरे-धीरे इस शब्द का प्रयोग ग्रंथ के लिए होने लगा–वह ग्रंथ जिसमें

विचारों को बाँधा जाता था, निबंध कहलाने लगा। किंतु हिंदी में निबंध शब्द का अलग ही अर्थ है।

आज 'निबंध' अंग्रेजी के 'एस्से' शब्द के अर्थ में प्रयुक्त होता हैं इस प्रकार निबंध में नए अर्थ जुड़े हैं और अनावश्यक अर्थों का त्याग हुआ है। फ्रांसिस बेकन ने 'एस्से' को 'डिस्पर्स्ड मैडिटेशन' अर्थात् बिखरे विचार माना है। इस धारणा के अनुसार साहित्यकार के मन में उठने वाले विचारों का लिखित रूप 'एस्से' है।

हिंदी में निबंध शब्द का प्रयोग गद्य की उस विधा के लिए होता है जिसमें विचारों को क्रमबद्ध रूप में रखा जाता है। कविता की अपेक्षा गद्य लिखना कठिन है और गद्य की अपेक्षा निबंध लिखना। इसका कारण यह है कि निबंध में विचारों को एक सुनिश्चित क्रम में ठूँस-ठूँस कर रखा जाता है। निबंध लेखन के लिए अध्ययन और विषय का ज्ञान आवश्यक है। इन्हीं कारणों से हिंदी के प्रसिद्ध निबंधकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निबंध को 'गद्य की कसौटी' माना है।

निबंध एक सीमित आकार वाली रचना है। इसमें विषय का प्रतिपादन निजीपन के साथ किया जाता है। विषय का विकास इस प्रकार से किया जाता है कि उसमें कोई बिखराव न हो। दूसरे शब्दों में विषय के प्रतिपादन में संगति तथा संबद्धता की आवश्यकता होती है। इसमें विवेचन की स्पष्टता के साथ भाषा की स्वच्छता तथा सजीवता की भी आवश्यकता होती है। निबंध की इन विशेषताओं को ध्यान में रखकर बाबू गुलाब राय ने इसकी परिभाषा इस प्रकार की है–''निबंध' सीमित आकार वाली वह रचना है जिसमें विषय का प्रतिपादन, निजीपन, स्वच्छता, सौष्ठव, सजीवता और आवश्यक संगति तथा संबद्धता के साथ किया जाता है।'' इन विशेषताओं के अतिरिक्त निबंध में बुद्धि और हृदय के योग को भी आवश्यक माना गया है। इसका अर्थ यह है कि निबंध लेखन में विचारों की ठूँस-ठाँस नहीं होती, लेखक उसे सरस, सजीव और रोचक बनाने के लिए उसमें अपने हृदय को भी उँडेलता है। इसके लिए कभी तो वह अपने जीवन की घटनाओं का उल्लेख करता है और कभी कुछ अन्य रोचक उदाहरणों का उपयोग कर लेता है। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि निबंध लेखन के पीछे लेखक छिपा रहता है। उसका व्यक्तित्व निबंध में कहीं-न-कहीं झलक जाता है और यदि ऐसा नहीं हो पाता है, तो निबंध अपना सौंदर्य खो बैठता है।

निबंध के तत्त्व

निबंध के प्रमुख तत्त्व निम्नलिखित हैं :

i) लेखक के व्यक्तित्व का प्रभाव

ii) वैचारिक और भावात्मक आधार

iii) भाषा-शैली

संक्षेप में उपरिलिखित तत्त्वों का विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है—

i) **लेखक के व्यक्तित्व का प्रभाव** : जब कोई लेखक किसी विषय पर निबंध लिखता है तो उस निबंध में उसका व्यक्तित्व भी आ जाता है। उदाहरण के लिए हम रामचन्द्र शुक्ल या हज़ारीप्रसाद द्विवेदी के निबंधों को देख सकते हैं। इन निबंधकारों के निबंधों में इनका व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ता है। इन्होंने किसी भी विषय वस्तु पर निबंध लिखे तो उनमें इनके व्यक्तित्व की छाप अवश्य पड़ी।

ii) **वैचारिक और भावात्मक आधार** : निबंध की रचना हवा में नहीं की जा सकती। निबंधकार निबंध में या तो किसी विचार की अभिव्यक्ति करता है या किसी भावना का चित्रण करता है। जिस निबंध में भावना का प्राधान्य होता है, वहाँ विचारों की भी गौण रूप में अभिव्यक्ति होती है। इसी प्रकार जिस निबंध में विचारों का प्राधान्य होता है, वहाँ भावनाएँ भी गौण रूप में उपस्थित रहती हैं। उदाहरण के रूप में आप रामचन्द्र शुक्ल के निबंध 'लोभ और प्रीति' को देख सकते हैं।

iii) **भाषा-शैली** : गद्य की अन्य विधाओं के समान निबंध में भी भाषा-शैली का महत्त्वपूर्ण स्थान है। निबंध की भाषा विषय के अनुरूप होनी चाहिए। आमतौर पर निबंधकार विषय वस्तु के अनुरूप भाषा का चयन करता है। निबंध की भाषा संस्कृतनिष्ठ, उर्दूनिष्ठ तथा बोल-चाल के निकट हो सकती है। जब निबंधकार संस्कृत के शब्दों का अधिक प्रयोग करता है, तो उसे संस्कृतनिष्ठ भाषा कहा जाता है। इसी प्रकार उर्दूनिष्ठ भाषा से तात्पर्य है अरबी, फ़ारसी तथा उर्दू के शब्दों की अधिकता। कई बार यह भी देखने में आया है कि निबंधकार इन तीनों का मिश्रण करके निबंध लेखन करता है।

शैली : वाक्य रचना की दृष्टि से निबंध की दो प्रमुख शैलियाँ हैं :

(1) व्यास शैली, और (2) समास शैली

व्यास शैली में लेखक विस्तारपूर्वक अपनी बात को समझाता है। इसमें लंबे-लंबे वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। निबंधकार उदाहरणों के द्वारा विषय को स्पष्ट करता है। विषय को विस्तारपूर्वक समझना इस शैली की प्रमुख विशेषता है।

समास शैली में लेखक छोटे-छोटे वाक्यों के द्वारा विषय को सूत्र रूप में प्रस्तुत करता है। इसमें विचारों को ठूंस-ठूंस कर छोटे से वाक्य में भर दिया जाता है तथा इस सूत्र वाक्य को समझने के लिए अधिक सजगता की आवश्यकता होती है। पाठक को इस शैली के वाक्यों को पढ़ कर कुछ देर के लिए रुकना पड़ता है–इस प्रकार के सूत्र वाक्यों की व्याख्या की आवश्यकता होती है और इन्हें समझे बिना आगे बढ़ पाना पाठक के लिए कठिन हो जाता है।

निबंधों के प्रमुख भेद

निबंधों के निम्नलिखित प्रमुख भेद माने गये हैं :

i) **वर्णनात्मक निबंध** : इनमें किसी स्थान या वस्तु का वर्णन होता है।

ii) **विवरणात्मक निबंध** : जिन निबंधों में किसी घटना या चरित्र का विवरण दिया जाता है, उन्हें विवरणात्मक निबंध कहते हैं। घटनाएँ निम्नलिखित प्रकार की हो सकती हैं :

क) ऐतिहासिक या पौराणिक कथाओं पर आधारित घटनाएँ,

ख) सच्ची या कल्पित कहानियों पर आधारित घटनाएँ,

ग) राजनीति, समाज या साहित्य के क्षेत्र में प्रसिद्ध व्यक्ति के जीवन पर आधारित घटनाएँ।

iii) **विचारात्मक निबंध** : जिन निबंधों में विचारों की प्रधानता हाती है उन्हें विचारात्मक निबंध कहते हैं। इस प्रकार के निबंधों में निबंधकार विषय के प्रत्येक पहलू का सोच-समझकर विवेचन करता है। निश्चय ही, इस कोटि के निबंधों में मस्तिष्क का अधिक योग रहता है तथा चिन्तन की प्रधानता होती है। सैद्धांतिक विषय का विवेचन इस प्रकार के निबंधों की सीमा में आता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का 'कविता क्या है' शीर्षक निबंध इसका अच्छा उदाहरण है।

iv) **भावनात्मक निबंध** : जिन निबंधों में भावनाओं की प्रधानता होती है उन्हें भावनात्मक निबंध कहते हैं। इस प्रकार के निबंधों में लेखक पाठकों को भावनात्मक रूप से उद्वेलित करने का प्रयत्न करता है। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के निबंध भावनात्मक हैं।

उपरिलिखित वर्गों के अतिरिक्त निबंध के कुछ और प्रकार भी माने गए हैं जैसे मनोवैज्ञानिक निबंध। इस प्रकार के निबंधों में मानव के मनोभावों का विश्लेषण किया जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के 'उत्साह', 'क्रोध' 'लोभ और प्रीति' आदि निबंध इसी प्रकार के हैं। मनोभावों का यह विवेचन विचारात्मक होता है, इसलिए कुछ विद्वान इन निबंधों को मनोवैज्ञानिक न कहकर विचारात्मक भी कह देते हैं।

इसी प्रकार हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय के निबंधों को ललित निबंध कहा जाता है। इन निबंधों में विचारों और भावों के साथ-साथ निबंध की प्रस्तुति में जो लालित्य होता है, वह खासतौर पर उल्लेखनीय है।

उपरिलिखित वर्गीकरण के स्थान पर कुछ आलोचक निबंध के निम्नलिखित दो मुख्य प्रकार मानने के पक्ष में हैं :

i) **विषयप्रधान निबंध** : इस कोटि के निबंधों में निबंधकार की दृष्टि विषय पर केंद्रित रहती है। वह विषय का इस प्रकार विवेचन करता है कि उसके विभिन्न पहलू पाठक के सामने स्पष्ट हो जाते हैं।

ii) **विषयीप्रधान निबंध** : इन निबंधों में लेखक का व्यक्तित्व पूरी तरह छाया रहता है। वह विषय का विवेचन भावना के धरातल पर करता है ओर उसमें पूरी तरह डूब जाता है। ललित निबंध को विषयीप्रधान निबंध भी कहा जाता है।

बोध प्रश्न

8. निबंध में विचारों को .....रूप में रखा जाता है।

9. निम्नलिखित कथनों में से कुछ सही हैं, कुछ गलत। आप सही कथन के आगे (√) और गलत कथन के आगे (X) का चिह्न लगाइए

   i) निबंध में लेखक के व्यक्तित्व की छाप रहती है। [ ]

   ii) निबंध का संबंध राजनीतिक विषय से नहीं हो सकता। [ ]

   iii) निबंध केवल वर्णनात्मक होते हैं। [ ]

10. नीचे लिखे तत्वों में से आप निबंध के तत्वों को छाँटिए :

    i) चरित्र-चित्रण

ii) लेखकीय प्रभाव

iii) चित्रात्मकता

iv) वैचारिक और भावात्मक आधार

2.8 आलोचना

किसी रचना का अर्थ, विवेचन और उसका मूल्यांकन ही 'समालोचना' है। इसे 'समीक्षा' भी कहते हैं। समालोचना में समालोचक किसी रचनाकार की रचना की परीक्षा करता है। दूसरे शब्दों में, वह रचना के गुण-दोषों को निष्पक्ष रूप में प्रकट कर उसके विषय में अपना मत भी प्रस्तुत करता है। सहानुभूतिपूर्वक रचना के मर्म को उद्‌घाटित करना समीक्षक का पहला कर्त्तव्य है। अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं और राग-द्वेष से ऊपर उठकर उसे यह काम पूरी ईमानदारी के साथ करना होता है। आलोचक के इस गुण को हम उसकी 'तटस्थता' कह सकते हैं। यह तटस्थता आलोचना की प्राणशक्ति है। आलोचना के आलोचना बने रहने के लिए निष्पक्ष और तटस्थ मूल्यांकन आवश्यक है।

किसी रचना की समीक्षा करते समय समीक्षक को उस रचना के विषय में अपना स्पष्ट मत प्रस्तुत करना होता है। दूसरे शब्दों में, उसे रचना के विषय में स्पष्ट निर्णय देना होता है। जिस समीक्षक का निर्णय जितना निर्भ्रान्त और निष्पक्ष होगा, उसकी समीक्षा उतनी ही उत्तम बन पड़ेगी।

आलोचना के प्रकार

यों तो आलोचना के अनेक प्रकार हैं, किंतु मोटे तौर पर इसे निम्नलिखित दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

i) **सैद्धांतिक आलोचना**

ii) **व्यावहारिक आलोचना**

सैद्धांतिक आलोचना में उन सिद्धांतों की चर्चा की जाती है जिनके आधार पर किसी रचना की समीक्षा की जा सकती है। रस, अलंकार आदि ऐसे ही सिद्धांत हैं। इस प्रकार के सिद्धांतों को समीक्षा का आधार माना जाता है। समीक्षा के इन आधारभूत सिद्धांतों के विषय में दी जाने वाली जानकारी सैद्धांतिक समीक्षा के अंतर्गत आती है। आधुनिक दृष्टि से समाजशास्त्र, मनोविज्ञान आदि के आधार पर किया जाने वाला सैद्धांतिक विवेचन भी इसी प्रकार का है।

जब समीक्षा के आधारभूत सिद्धांतों के आधार पर किसी कृति की समीक्षा की जाती है तो वह आलोचना का व्यावहारिक रूप होता है। दूसरे शब्दों में, इसे व्यावहारिक समीक्षा कहते हैं। उदाहरण के लिए सूरदास के काव्य का रस, मनोविज्ञान अथवा समाजशास्त्र की दृष्टि से किया जाने वाला विश्लेषण व्यावहारिक समीक्षा के अंतर्गत आएगा।

बोध प्रश्न

11. दिए गए शब्दों में से उपयुक्त शब्द के प्रयोग द्वारा निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए ।

i) समालोचना में समालोचक किसी रचनाकार की रचना का ..... करता है। (प्रकाशन, मूल्यांकन, संयोजन)

ii) आलोचक .....रचना के मर्म को उद्‌घाटित करता है।
(सहृदयतापूर्वक, व्यक्तिनिष्ठ भाव से)

iii) आलोचना के आलोचना बने रहने के लिए निष्पक्ष और ..... मूल्यांकन आवश्यक है। (सापेक्ष, प्रभावपूर्ण, तटस्थ)

12. अच्छे आलोचक का एक गुण है विद्वत्ता। आप उसके दो अन्य गुणों का उल्लेख कीजिए :

.....

.....

.....

.....

13. आलोचना के प्रमुख दो प्रकारों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2.9 रेखाचित्र और संस्मरण

रेखाचित्र और संस्मरण हिंदी-साहित्य की नवीन विधाएँ हैं। जब किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान, घटना, दृश्य आदि का इस प्रकार वर्णन किया जाता है कि पाठक के मन पर उसका हू-ब-हू चित्र बन जाता है तो उसे रेखाचित्र कहते हैं। इस प्रकार के वर्णन का तटस्थ होना आवश्यक है। इसके विपरीत जब लेखक अपने या किसी अन्य व्यक्ति के जीवन में बीती किसी घटना अथवा दृश्य का स्मरण कर उसका वर्णन करता है तो उसे संस्मरण कहते हैं। रेखाचित्र में वर्णन का हू-ब-हू होना आवश्यक है और संस्मरण में उसका स्मृति के आधार पर लिखा जाना। एक अन्य बात यह भी है कि रेखाचित्र में लेखक का वर्णित घटना, व्यक्ति आदि के साथ निजी संबंध होना आवश्यक नहीं है, जबकि संस्मरण के लिए यह आवश्यक है। संस्मरण लिखने के लिए यह जरूरी है कि लेखक का वर्णित व्यक्ति, घटना आदि के साथ व्यक्तिगत संबंध रहा हो।

रेखाचित्र अतीत का भी हो सकता है, वर्तमान का भी और यदि लेखक के मन में भविष्य का कोई चित्र है तो उसका भी हो सकता है। संस्मरण अतीत का ही हो सकता है, वर्तमान या भविष्य का नहीं।

संस्मरण में लेखक उन्हीं तथ्यों का वर्णन करता है जो वास्तव में घटित हो चुके हैं। उसे अपनी कल्पना से कुछ भी जोड़ने की छूट नहीं है। रेखाचित्र में इस प्रकार का कोई बंधन नहीं है।

रेखाचित्र में लेखक के निजी व्यक्तित्व का कोई महत्त्व नहीं होता। संस्मरण में लेखक के निजी विचार किसी-न-किसी प्रकार आ ही जाते हैं, क्योंकि उसका संबंध उसके अपने जीवन से होता है।

विस्तार संस्मरण की विशेषता है। प्रसंगों को याद करते समय लेखक उन्हें रुचिकर बनाकर प्रस्तुत करता है और कहानी कहने के लहजे का उपयोग करता है। इससे वर्णन में फैलाव आता है। कम से कम शब्दों का उपयोग कर बात रखने की कला का रेखाचित्र में विशेष महत्त्व है। अनावश्यक विस्तार रेखाचित्र को भोंडा बना देता है।

रेखाचित्र में वर्णन इतना सुगठित और प्रभावपूर्ण होना चाहिए कि उसका चित्र पाठक के सामने उपस्थित हो जाए। ऐसा लगे कि किसी चित्रकार का बनाया हुआ चित्र आँखों के सामने है। शब्दों के द्वारा चित्र अंकित करने के इस गुण को चित्रात्मकता कहते हैं। यह रेखाचित्र की बहुत बड़ी विशेषता है। वास्तव में रेखाचित्रकार का काम शब्दों के द्वारा चित्रों की शृंखला प्रस्तुत करने का है।

संस्मरण कभी जीवनी के निकट चला आता है, कभी आत्मकथा के। यदि लेखक अपने व्यक्तिगत जीवन की घटनाओं को याद करता है तो वह 'आत्मकथा' के निकट आ जाता है और यदि अन्य व्यक्ति के साथ घटी घटनाओं को याद करता है तो वह 'जीवनी' के निकट पहुँच जाता है। मुख्य बात यह है कि इसमें लेखक या किसी अन्य व्यक्ति के जीवन का कोई पक्ष सामने अवश्य आता है। इसके साथ, सबसे बड़ी बात यह है कि वह वर्णन इस प्रकार करता है, मानो बीती घटनाओं को याद कर रहा हो।

बोध प्रश्न

14. उपयुक्त शब्दों के द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

    i) जब किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान, घटना, दृश्य आदि का इस प्रकार वर्णन किया जाता है कि पाठक के मन पर उसका ..... बन जाता है तो उसे रेखाचित्र कहते हैं।

    ii) संस्मरण .....का ही हो सकता है, वर्तमान या भविष्य का नहीं।

15. रेखाचित्र और संस्मरण में किन्हीं दो अन्तरों का उल्लेख कीजिए।

    i) .....
    .....

    ii) .....
    .....

2.10 आत्मकथा और जीवनी

आत्मकथा और जीवनी एक-दूसरे से मिलती-जुलती विधाएँ हैं, फिर भी इन दोनों में भेद है। इनमें मुख्य अंतर यह है कि जहाँ आत्मकथा का लेखक अपने जीवन के बारे में खुद लिखता है, वहाँ जीवनी लेखक किसी दूसरे व्यक्ति के बारे में लिखता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि किसी व्यक्ति द्वारा स्वयं लिखी गई अपनी जीवनी आत्मकथा है। इसके विपरीत, जब कोई लेखक किसी अन्य व्यक्ति के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को कालक्रमानुसार रोचक ढंग से प्रस्तुत करता है तो उसे

जीवनी कहते हैं। आत्मकथा का नायक लेखक स्वयं होता है जबकि जीवनी का नायक लेखक स्वयं नहीं, कोई अन्य व्यक्ति होता हैं जिसके जीवन को आधार बनाकर जीवनी लिखी जाती है।

आत्मकथा में लेखक अपने बीते हुए जीवन पर दृष्टि डालता है, अपने अतीत का विश्लेषण करता है, इसलिए उसे बाहरी सामग्री की तलाश नहीं करनी पड़ती, जबकि जीवनी-लेखक के लिए इसकी आवश्यकता रहती है। जीवनी-लेखक जिसकी जीवनी लिखता है, यदि उससे उसका निकट का संपर्क हो तो यह अच्छी बात है। यदि चरित-नायक से लेखक का निकट का संपर्क न हो तो वह अपने चरित-नायक के जीवन की प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। इसके लिए वह निम्नलिखित स्रोतों का उपयोग करता है:

i) संबंधित चरित्र-नायक पर लिखित पुस्तकों या लेखों का,

ii) चरित-नायक द्वारा लिखित डायरी, पत्रों आदि का,

iii) चरित-नायक के समकालीनों के संस्मरणों का,

iv) संबंधित स्थानों के भ्रमण से प्राप्त तथ्यों का,

v) किसी अन्य स्रोत से प्राप्त जानकारी का।

आत्मकथा और जीवनी में कुछ समानताएँ भी हैं। आत्मकथा और जीवनी लिखने के लिए यह जरूरी नहीं कि व्यक्ति के जीवन की सभी घटनाएँ ली जाएँ, किंतु इनमें हृदय को छूने वाली अथवा जीवन में मोड़ लाने वाली घटनाओं का समावेश आवश्यक है। इनमें चरित-नायक के जीवन की प्रामाणिक और तथ्यपरक जानकारी की अपेक्षा रहती है, इसलिए कल्पना और कृत्रिमता के लिए इनमें कोई स्थान नहीं होता। साहित्य के अन्य रूपों के समान, आत्मकथा और जीवनी की शैली भी प्रभावपूर्ण होनी चाहिए। जीवन में घटित घटनाओं के क्रम का भी इन विधाओं में ध्यान रखना होता है। दूसरे शब्दों में, घटनाएँ उसी क्रम में लिखी जानी चाहिए, जिस क्रम में वे घटी हों। आत्मकथा और जीवनी यदि प्रभावपूर्ण शैली में लिखी गयी हों तो वे उपन्यास की भाँति रोचक हो सकती हैं।

2.11 यात्रावृत्त

जब लेखक अपनी यात्रा के दौरान देखे गए स्थानों का वर्णन करता है तो उसे यात्रावृत्तांत या यात्रा-साहित्य कहते हैं। लेखक वर्ण्य–विषय का वर्णन आत्मीयता तथा निजता के साथ करता है। जिस स्थान का वह वर्णन करता है उसके साथ उसका जुड़ाव होता है तथा उसके अपने जीवन-संदर्भ भी उसमें आते हैं। आत्मीयता तथा निजता का यह गुण निबंध-शैली की भी विशेषता है, इसलिए यह कहा जा सकता है कि यात्रावृत्त की वर्णन-प्रक्रिया निबंध की सी होती है। फिर भी यात्रावृत्त निबंध नहीं है, क्योंकि इसमें किसी भी विषय का समावेश नहीं हो सकता। इसमें तो यात्रा के दौरान देखे गए स्थानों का वर्णन ही अपेक्षित है।

यात्रावृत्त के लेखक अपनी यात्रा के दौरान देखे गए स्थानों का वर्णन प्रायः स्मृति के आधार पर करते हैं, इसलिए किसी अच्छे यात्रावृत्त में संस्मरण की प्रवृत्ति भी रहती है। फिर भी, यात्रावृत्त और संस्मरण एक-दूसरे से भिन्न हैं। यात्रावृत्त में समय तथा स्थान का उल्लेख अनिवार्य रूप से होता है, लेकिन संस्मरण में स्थान तथा समय का

उल्लेख अनिवार्य नहीं है। इसके अतिरिक्त यात्रावृत्त में यात्रा के दौरान देखे गए स्थानों, दृश्यों अथवा घटनाओं से जुड़ी सामयिक स्मृतियों का वर्णन होता है, जबकि संस्मरण में स्थायी और अमिट स्मृतियों का वर्णन किया जाता है।

2.12 रिपोर्ताज

'रिपोर्ताज' फ्रेंच भाषा का शब्द है तथा अंग्रेजी के 'रिपोर्ट' शब्द से इसका घनिष्ठ संबंध है। किसी घटना के यथातथ्य विवरण को 'रिपोर्ट' कहते हैं जो प्रायः समाचारपत्रों के लिए लिखी जाती है। रिपोर्ट के साहित्यिक और कलात्मक रूप को हम 'रिपोर्ताज' कह सकते हैं।

'रिपोर्ताज' का लेखक 'रिपोर्ताज' में दंगे, युद्ध, जनसंहार यानी देशों और समुदायों के बीच चलने वाले संघर्षों और महामारी, अकाल, बाढ़ यानी प्राकृतिक आपदाओं आदि का आँखों-देखा समाचार वर्णित करता है पर उसका उद्‌देश्य सूचना देना-भर नहीं होता। इसके पीछे उसकी एक विशेष दृष्टि होती है। लेखक का मुख्य उद्‌देश्य इंसानी और प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न विषम स्थितियों का निष्पक्षता और संवेदनशीलता के साथ वर्णन कर लोगों को ऐसी आपदाओं के प्रति जागरूक करना और उनके दुष्परिणामों से अवगत कराना है। यह आवश्यक नहीं है कि रिपोर्ताज सदैव आपदाओं पर ही लिखे जाएँ, सामान्य स्थितियों को भी रिपोर्ताज लेखक इस रूप में पेश कर सकता है कि उन स्थितियों में निहित समस्याओं की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हो। रिपोर्ताज में घटनाएँ, स्थितियाँ और प्रसंग महत्त्वपूर्ण होते हैं लेकिन उन लोगों के जीवन का भी उल्लेख होता है जो इनसे जुड़े हैं और जिनकी किसी न किसी रूप में महत्त्वपूर्ण भूमिका रिपोर्ताज लेखक को दिखाई देती है। इस प्रकार एक वाक्य में यह कहा जा सकता है कि जब कोई समाचार केवल समाचार नहीं रहता, वरन् मानव-मूल्यों से जुड़कर साहित्य की स्थायी सम्पत्ति बन जाता है तब उसे 'रिपोर्ताज' कहते हैं।

बोध प्रश्न

16. आत्मकथा और जीवनी के मुख्य अंतर को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

17. जीवनी-लेखक द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले स्रोतों में से किन्हीं दो का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

18. समाचार और रिपोर्ताज में क्या अन्तर है ? (दो पंक्तियों में लिखिए)

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए:

1. उपन्यास विधा की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
2. निबंध को परिभाषित करते हुए उसके प्रमुख तत्त्वों का उल्लेख कीजिए।
3. रेडियो नाटक और टेलीविजन नाटक में अंतर स्पष्ट कीजिए।

2.13 सारांश

इस इकाई में आपने हिंदी गद्य की विविध विधाओं की जानकारी प्राप्त की है। आशा है, इस इकाई का अध्ययन आपने ध्यानपूर्वक किया होगा और इसे पढ़कर आप गद्य की विविध विधाओं को अच्छी तरह समझ गए होंगे।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- साहित्य और वाङ्मय में अंतर कर सकते हैं;
- साहित्यिक रचनाओं का वर्गीकरण कर सकते हैं;
- ज्ञान-विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप साहित्य में विकसित नवीन विधाओं को बता सकते हैं;
- गद्य की विभिन्न विधाओं जैसे नाटक, एकांकी, उपन्यास, कहानी, निबंध आलोचना, रेखाचित्र, संस्मरण आदि के स्वरूप को समझ सकते हैं;
- गद्य की विभिन्न विधाओं जैसे नाटक और एकांकी, उपन्यास और कहानी, रेखाचित्र और संस्मरण, आत्मकथा और जीवनी आदि में अंतर कर सकते हैं; और
- एक-दूसरे से मिलती-जुलती गद्य विधाओं जैसे नाटक और एकांकी, आत्मकथा और जीवनी, रेखाचित्र और संस्मरण आदि में मिलने वाली समानता को भी समझा सकते हैं।

2.14 शब्दावली

वाङ्मय : किसी भी विषय पर लिखी रचनाएँ।

इतिवृत्तात्मक : पुरानी कथा या कहानी का कल्पना रहित वर्णन करना।

प्रत्यक्ष शैली : जब उपन्यासकार उपन्यास लिखते हुए उसमें वस्तुओं अथवा घटनाओं आदि का स्वयं विवरण देने लगता है तो उसकी यह शैली प्रत्यक्ष शैली कही जाती है।

परोक्ष शैली : पात्रों के संवादों के माध्यम से घटनाओं आदि का परिचय याविवरण देना परोक्ष शैली कहलाता है।

पूर्वदीप्ति : कभी-कभी पात्र के चरित्र को विकसित करने के लिए या घटनाओं को नाटकीय ढंग से रखने के लिए लेखक कभी पहले की घटित घटनाओं का पात्र विशेष के द्वारा स्मरण कराता है और उनको वर्तमान घटना की पृष्ठभूमि के रूप में इस्तेमाल करता है। इस शैली को पूर्वदीप्ति शैली कहते है।

2.15 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

1. वाङ्मय में सभी प्रकार की रचनाएँ आ जाती हैं, जबकि साहित्य में केवल उन्हीं रचनाओं का समावेश हो सकता है जिनके देखने, पढ़ने या सुनने से पाठक को आनन्द की प्राप्ति होती है। सूचनात्मक, विवेचनात्मक और सृजनात्मक वर्गों में आने वाली सभी कृतियाँ, 'वाङ्मय' कहला सकती हैं, पर इनमें से सृजनात्मक वर्ग की रचनाएँ ही 'साहित्य' में गिनी जाएँगी।
2. i) रेडियो नाटक (ii) टेलीविजन नाटक
3. i) दृश्य ii) ध्वनि iii) एक
4. तिलस्मी उपन्यास में इन्द्रजाल, जादू, अद्भुत कारनामें, अलौकिक व्यापार तथा चमत्कार से पूर्ण घटनाएँ होती हैं।
   जासूसी उपन्यास की खास बात यह होती है कि इसमें नायक जासूस होता है जिसका मुख्य कार्य किसी भेद का पता लगाना होता है। वह किसी हत्यारे का, किसी अपराधी का या किसी रहस्य का पता लगाता है। वह अद्भुत और साहसपूर्ण कारनामे करता है।
5. i) उपन्यास में एक से अधिक कथाएँ एक दूसरे के समानान्तर चलती हैं। कहानी में एक कथा होती है।
   ii) उपन्यास में कथा का विस्तार रहता है। कहानी में कथा संक्षिप्त होती है।
   iii) उपन्यास में पात्रों की संख्या अधिक होती है, कहानी में कम।
6. i) पात्रों के कार्यों अथवा विचारों के द्वारा,
   ii) पात्रों के वार्तालाप द्वारा, तथा
   iii) लेखक द्वारा पात्रों के गुण-दोषों का कथन।
7. i) लघुता या संक्षिप्तता ii) विवरणविहीनता iii) घटनाविहीनता
8. क्रमबद्ध
9. i) (√) ii) (x) iii) (x)
10. ii) तथा iv)
11. i) मूल्यांकन iii) तटस्थ
    ii) सहृदयतापूर्वक
12. निष्पक्षता, तार्किकता तथा विवेचन-विश्लेषण की क्षमता।
13. i) सैद्धांतिक आलोचना ii) व्यावहारिक आलोचना
14. i) चित्र ii) अतीत

15. i) संस्मरण में तथ्यपरकता होती है, रेखाचित्र में कल्पना का पुट भी हो सकता है।

    ii) रेखाचित्र में लेखक के निजी व्यक्तित्व का कोई महत्त्व नहीं होता, लेकिन संस्मरण में लेखक के निजी विचार किसी-न-किसी प्रकार आ ही जाते हैं।

    iii) विस्तार संस्मरण की विशेषता है और संक्षेप रेखाचित्र की।

16. जहाँ आत्मकथा का लेखक अपने जीवन के बारे में खुद लिखता है, वहाँ जीवनी-लेखक किसी दूसरे व्यक्ति के बारे में लिखता है।

17. i) वर्ण्य विषय या उससे संबंधित विषयों पर लिखित पुस्तकें

    ii) मूल सामग्री जैसे चरित-नायक द्वारा लिखित डायरी, पत्र आदि, तथा

    iii) चरित-नायक के समकालीनों के संस्मरण का।

18. समाचार तथ्य पर आधारित होता है और उसका उद्‌देश्य सूचना देना भर होता है जबकि रिपोर्ताज मानव-मूल्यों से जुड़ कर साहित्य की स्थायी सम्पत्ति बन जाता है।

अभ्यास

1. इकाई के भाग 2.4 का अध्ययन कर उत्तर लिखिए।
2. इकाई के भाग 2.7 का अध्ययन कर उत्तर लिखिए।
3. इकाई के भाग 2.3.1 और 2.3.2 का अध्ययन कर उत्तर लिखिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY